गत हमारी बना रहे हो क्यों।
मिल न, गद की सकी हमें लकड़ी॥
पाँव हम तो रहे पकड़ते ही।
पर कहाँ बाँह आप ने पकड़ी॥

देखिये आप आ कलेजे में।
पड़ गये कुछ अजीब छाले हैं॥
आप के हाथ अब निबाह रही।
आप ही चार बाँहवाले हैं॥

खोलिये पलकें दया कर देखिये।
मूँछ के भी बाल अब हैं बिन रहे॥
दिन फिरेंगे या फिरेंगे ही नहीं।
ऊब दिन हैं उँगलियों पर गिन रहे॥

अब नहीं है निबाह हो पाता।
नेह करिये निहारिये हम को॥
क्या उबर अब नहीं सकेंगे हम।
हाथ देकर उबारिये हम को॥

पास मेरे इधर उधर आगे।
है दुखों का पड़ा हुआ डेरा॥
है गई अब बुरी पकड़ पकड़ी।
आप आ हाथ लें पकड़ मेरा॥

फिर रही है बुरी बला पीछे।
खोलता दुख बिहंग है फिर पर॥
बेतरह फेर में पड़े हम हैं।
फेरते हाथ क्यों नहीं सिर पर॥

बह रहे हैं बिपत लहर में हम।
अब दया का दिखा किनारा दें॥
क्या कहूं और— हूं बहुत हारा।
प्रभु हमें हाथ का सहारा दें॥

क्यों दिखाने में अँगूठा दीन को।
आप की रुचि आज दिन यों है तुली॥
हैं तरसते एक मूठी अन्न को।
आप की मूठी नहीं अब भी खुली॥

दें न हलवे छीन तो करवे न लें।
नाथ कब तक देखते जलवे रहें॥
कब तलक बलवे रहेंगे देस में।
कब तलक हम चाटते तलवे रहें॥

सच्चे देवते

मान के ऊंचे महल में पा जिसे।
सिर उठाये जाति के बच्चे घुसे॥
आँख जिस से देस की ऊंची हुई।
क्यों न आँखों पर बिठायें हम उसे॥

जो कि समझें कठोर राहों से।
टल गये तो किया मरद हो क्या॥
उन बिछे सिर धरों के पाँव तले।
जो न आँखें बिछीं बिछीं तो क्या॥

हो चुके देस पर निछावर जो।
स्वाद जो जाति प्यार का चख लें॥
धूल लें पाँव की लगा उन के।
चाहिये आँख पर उन्हें रख लें॥

नित बहुत दौड़ धूप जी से कर।
जो गिरी जाति को उठा देवें॥
चाहिये पाँव चाह से उन का।
चूम लें आँख से लगा लेवें॥

प्यार से पाँव चूम लेवेंगे।
धूल सिर पर ललक लगा लेंगे॥
आइये ऐ मिलाप के पुतले।
हम पलक पाँवड़े बिछा देंगे॥

हाथ वे ही हाथ हैं जिस हाथ के।
चूमने की चाह रखते हों बड़े॥
पाँव वे ही पाँव हैं जिन के लिये।
पाँवड़े कितनी पलक के हों पड़े॥

जाति की जान देख जोखों में।
जो जसी लोग जान पर खेलें॥
लालसा लाख बार होती है।
हम पलक पर उन्हें ललक ले लें॥

क्यों नहीं उन को बिठायें आँख पर।
धूल पग की क्यों न आदर साथ लें॥
जाति जिन के हाथ से ऊंचे उठी।
लोग उन को क्यों न हाथोंहाथ लें॥

पाँव जो हैं जाति के जीवन बने।
क्यों न उन की धूल ले लेकर जियें॥
गल रहा है पाप मल है धुल रहा।
क्यों भला धो धो न हम तलवे पियें॥

पाँव वह क्यों चाव से चूमें न हम।
काठ उकठे छू जिसे फूलें फलें॥
धूल लगते देखने अंधे लगे।
लोग आँखें क्यों न तलवों से मलें॥

तब कहां सच्ची लगन है लग सकी।
प्यार में पग जो न पग देखे भले॥
क्या बिछाये आँख तब बैठे रहे।
आँख बिछ पाई न जब तलवों तले॥

जाति के जीवन

साहसी

बीज को धूल में मिला कर भी।
जो नहीं धूल में मिला देते॥
ऊसरों में कमल खिला देना।
वे हँसी खेल हैं समझ लेते॥

धज्जियां उड़ते दहलते जो नहीं।
सिर उतरते किस लिये वे सी करें॥
तन नपाते जो सहम पाते नहीं।
वे भला गरदन नपाते क्यों डरें॥

पाजियों को गाल क्यों दें मारने।
सामने दुख फिरकियां फिरती रहें॥
जिस तरह हो चीर देंगे गाल हम।
चिर गईं तो उँगलियां चिरती रहें॥

वह बने आस छोड़ बेचारा।
पास जिस के रहा न चारा है॥
हार हिम्मत न छोड़ देंगे हम।
नँह नहीं गिर गया हमारा है॥

क्या करेगा भाग हिम्मत चाहिये।
हाथ में हित कुंजियां क्या हैं नहीं॥
जो लकीरें हैं लकीरें भाग की।
कब न मूठी में हमारी वे रहीं॥

हैं करमरेख मूठियों में ही।
बेहतरी बाँह के सहारे है॥
कर नहीं कौन काम हम सकते।
क्या नहीं हाथ में हमारे है॥

साहसी के हाथ में ही सिद्धि है।
लोटता है लाभ पाँवों के तले॥
है दिलेरी खेल बायें हाथ का।
हैं खिलौने हाथ के सब हौसले॥

जो रहे ताकते पराया मुँह।
तो दुखों से न किस लिये जकड़ें॥
क्यों न हों पाँव पर खड़े अपने।
और का पाँव किस लिये पकड़ें॥

ठोकरें मार चूर चूर करें।
पथ अगर हो पहाड़ ने घेरा॥
क्यों नहीं बेड़िगे भरें डग हम।
पांव क्यों जाय डगमगा मेरा॥

जम गये, छोड़ता जगह क्यों है।
क्यों नहीं गड़ पहाड़ लौं पाता॥
दूसरों के उखाड़ देने से।
पाँव क्यों है उखड़ उखड़ जाता॥

कांपता बात बात में है जी।
फल बुरे हैं इसी लिये चखते॥
फूंक से आप उड़ न जावेंगे।
पाँव क्यों फूंक फूंक हैं रखते॥

जी लगा यह पाठ हम पढ़ते रहें।
कट गये हैं बाल बढ़ने के लिये॥
बात यह चित से कभी उतरे नहीं।
हैं उतरते फूल चढ़ने के लिये॥

सच्चे बीर

संकटों को तब करे परवाह क्या।
हाथ झंडा जब सुधारों का लिया॥
तब भला वह मूसलों को क्या गिने।
जब किसी ने ओखली में सिर दिया॥

दूसरों को उबार लेते हैं।
एक दो बीर ही बिपद में गिर॥
पर बहुत लोग पाक बनते हैं।
ठीकरा फोड़ दूसरों के सिर॥

सामने पाकर बिपद की आँधियां।
बीर मुखड़ा नेक कुम्हलाता नहीं॥
देख कर आती उमड़ती दुख-घटा।
आँख में आँसू उमड़ आता नहीं॥

सब दिनों मुँह देख जीवट का जिये ।
लात अब कायरपने की क्यों सहें ।
क्यों न बैरी को विपद में डाल दें ।
हम भला क्यों डालते आँसू रहें ॥

वे कभी बात में नहीं आते ।
लग गई हैं जिन्हें कि सच्ची धुन ॥
वे भला आप सूख जाते क्या ।
मुख न सूखा जवाब सूखा सुन ॥

काल की परवाह बीरों को नहीं ।
वह रहे उन को भले ही लूटता ॥
काम छेड़ा छूटता छोड़े नहीं ।
टूटता है दम रहे तो टूटता ॥

हमारे सूरमे

छोड़ कर लाड़ प्यार लड़ने को।
जो हमें बार बार ललकारें॥
तीर तदबीर हाथ में ले कर।
क्यों उन्हें तो न ताक कर मारें॥

हम लड़ेंगे और लड़ते रहेंगे।
क्यों न वे जी जान से हम से लड़ें॥
धो न बैठेंगे हितों से हाथ हम।
हाथ धो कर क्यों न वे पीछे पड़ें॥

हम डरेंगे कभी नहीं उन से।
पाप से जो नहीं डरे होंगे॥
हाथ उन के नहीं बँटायेंगे।
हाथ जिन के लहू भरे होंगे॥

क्यों उमंगें जाँय दसगूनी न हो।
चाव कैसे चित न चौगूना करे॥
जब कि जी भर हम उभर पाते नहीं।
किस तरह तब जी बिना उभरे भरे॥

जान कितने लोग की बच जाय तो।
जान जाना जान जाना है नहीं॥
जाति के हित के लिये गँव आ गये।
जी गँवाना जी गँवाना है नहीं॥

मान सच्चा हाथ आने के लिये।
हाथ की ही हथकड़ी, हैं हथकड़े॥
जाति-हित बीड़ा उठा आगे बढ़े।
भाग है, जो पाँव में बेड़ी पड़े॥

जम गया तो जमा रहे रन में।
क्यों लहू से न रोम रोम सिंचे॥
है खचाखच मची हुई तो क्या।
खींच लें पाँव हम न खाल खिंचे॥

जाति-हित बूटी रहेंगे खोजते।
चोट खावें क्यों न भन्नाते रहें॥
हम पहाड़ों में रहेंगे घूमते।
पत्थरों से पाँव टकराते रहें॥

जम गये काम कर दिखायेंगे।
कौन से काम हैं नहीं 'कस' के॥
जी गये भी खसक नहीं सकते।
क्यों खसक जाँय पाँव के खसके॥

हम नहीं हैं फूल जो वे दें मसल।
हैं न ओले जो हवा लगते गलें॥
हैं न हलवे जाय जो कोई निगल।
हैं न चींटी जो हमें तलवे मलें॥

आनबानवाले

बीसियों बार छान बीन करें।
पर चलें वे न और काम तले॥
जी करे डाह दें बिपत हम पर।
पत उतारें न कान के पतले॥

जो लगायें कहें लगी लिपटी।
वे कभी बन सके नहीं सच्चे॥
क्यों भला बात हम सुनें कच्ची।
हैं न बच्चे न कान के कच्चे॥

देख मनमानी बहुत जी पक गया।
अब भला चुप किस तरह से हम रहें॥
बात लगती बेकहों को बेधड़क।
हम कहेंगे औ न क्यों मुँह पर कहें॥

हम फिरेंगे न बात से अपनी।
आँख जो फिर गई तो फिरने दो॥
हम गिरेंगे कभी न मुँह के बल।
मुँह अगर गिर गया तो गिरने दो॥

खींच ली जाय जीभ क्यों उन की।
गालियां जो कि जी जले ही दें॥
बंद होगा न आँख का आँसू।
आप मुँह बन्द कर भले ही दें॥

सब समझ सोच तो सकेंगे ही।
आप सारे उपाय कर लेवें॥
बंद होगा न, देखना सुनना।
आप मुँह क्यों न बन्द कर देवें॥

पड़ गया जब कि देखना नीचा।
तब भला किस तरह न वह खलता॥
जब चलाये न बात चल पाई।
तब भला किस तरह न मुँह चलता॥

जो पड़े सिर पर, रहें सहते उसे।
पर न औरों के बुरे तेवर सहें॥
दिन बितायें चाब मूठी भर चना।
पर किसी की भी न मूठी में रहें॥

तब खरा रह गया कहां सोना।
जब हुआ मैल दूर आंचें खा॥
क्यों न मुँह की बनी रहे लाली।
गाल क्यों लाल हो तमाचे खा॥

हित-गुटके

याद

क्या रहे और हो गये अब क्या।
याद यह बार बार कहती है॥
सोच में रात बीत जाती है।
आँख छत से लगी ही रहती है॥

हुन बरसता था, अमन था, चैन था।
था फला-फूला निराला राज भी॥
वह समां हम हिन्दुओं के औज का।
आँख में है घूम जाता आज भी॥

वे हमारे अजीब धुनवाले।
सब तरह ठीक जो उतरते थे॥
आज जो हैं कमाल के पुतले।
कान उन के कभी कतरते थे॥

जब रहे रात दिन हमारे वे।
पाँव जब धाक चूम जाती है॥
क्या रहे और तब रहे कैसे।
अब न वह बात याद आती है॥

हैं पटकते कलप कलप उठते।
याद कर राज पाट खोना हम॥
होंठ को चाट चाट लेते हैं।
देख दिल का उचाट होना हम॥

जो कि दमदार थे बड़े उन को।
धूल में था मिला दिया दम में॥
थे दिलावर कभी हमीं जग में।
थी बड़ी ही दिलावरी हम में॥

साँसतों का सगा सितम पुतला।
कब हमें मानता न यम सा था॥
थी दिलेरी बहुत बड़ी हम में।
कौन जग में दिलेर हम सा था॥

ललक

बीत पाते नहीं दुखों के दिन।
कब तलक दुख सहें कुढ़ें काँखें॥
देखने के लिये सुखों के दिन।
हैं हमारी तरस रहीं आंखें॥

सुख-झलक ही देख लेने के लिये।
आज दिन हैं रात दिन रहते खड़े॥
बात हम अपने ललक की क्या कहें।
डालते हैं नित पलक के पाँवड़े॥

कचट

क्या न हित-बेलि लहलही होगी।
क्या सकेगा न चैन चित में थम॥
हो सकेंगे न क्या भले दिनफल।
क्या सकेंगे न फूल फल अब हम॥

सांसतें क्या इसी तरह होंगी।
जायगा सुख न क्या कभी भोगा॥
क्या दुखी दिन बदिन बनेंगे हो।
क्या कुदिन अब सुदिन नहीं होगा॥

क्या बचाये न बच सकेगा कुछ।
क्या चला जायगा हमारा सब॥
क्या गिरेंगे इसी तरह दिन दिन।
क्या फिरेंगे न दिन हमारे अब॥

कर लगातार भूल पर भूलें।
क्या रहेंगे सदा बने भोले॥
क्यों खले खोखले बना कोई।
क्या खुलेगी न आँख अब खोले॥

क्या बुरे से बुरे दुखों को सह।
एँड़ियां ही घिसा करेंगे हम।
क्या टलेंगे न पीसने वाले।
क्या सदा ही पिसा करेंगे हम॥

क्या से क्या

धूल में धाक मिल गई सारी।
रह गये रोब दाब के न पते॥
अब कहां दबदबा हमारा है।
आज हैं बात बात में दबते॥

आज दिन धूल है बरसती वां।
धुन बरसता रहा जहां सब दिन॥
तन रतन से सजे रहे जिन के।
बेतरह आज वे गये तन बिन॥

आज बेढंग बन गये हैं वे।
ढंग जिन में भरे हुए कुल थे॥
बांध सकते नहीं कमर भी वे।
बांधते जो समुद्र पर पुल थे॥

जो रहे आसमान पर उड़ते।
आज उन के कतर गये हैं पर॥
सिर उठाना उन्हें पहाड़ हुआ।
जो उठाते पहाड़ उँगली पर॥

हैं रहे डूब वे गड़हियों में।
बेतरह बार बार खा धोखा॥
सूखता था समुद्र देख जिन्हें।
था जिन्हों ने समुद्र को सोखा॥

जो सदा मारते रहे पाला।
वे पड़े टालटूल के पाले॥
आज हैं गाल मारते बैठे।
जंगलों के खँगालने वाले॥

तप सहारे न क्या सके कर जो।
मन उन्हीं का मरा बहुत हारा॥
हैं लहू घूँट आज वे पीते।
पी गये थे समुद्र जो सारा॥

सब तरह आज हार वे बैठे।
जो कभी थे न हारने वाले॥
आप हैं अब उबर नहीं पाते।
स्वर्ग के भी उबारने वाले॥

पेड़ को जो उखाड़ लेते थे।
हैं न सकते उखाड़ वे मोथे॥
वे नहीं कूद फांद कर पाते।
फांद जाते समुद्र को जो थे॥

जो जगत-जाल तोड़ देते थे।
तोड़ सकते वही नहीं जाला॥
वे मथे मथ दही नहीं पाते।
था जिन्हों ने समुद्र मथ डाला॥

क्या थे क्या हो गये

भोर-तारे जो बने थे तेज खो।
आज वे हैं तेज उन का खो रहे॥
मांद उन की जोत जगती हो गई।
चाँद जैसे जगमगाते जो रहे॥

पालने वाले नहीं अब वे रहे।
इस लिये अब हम पनप पलते नहीं॥
डालियां जिनकी फलों से थीं लदी।
पेड़ वे अब फूलते फलते नहीं॥

धूल उन की है उड़ाई जा रही।
धूल में मिल धूल वे हैं फांकते॥
सब जगत मुँह ताकता जिन का रहा।
आज वे हैं मुँह पराया ताकते॥

चोट पर है चोट चित को लग रही ।
आज उन का मन बहुत ही है मरा ॥
धूम जिन का धूम धामों की रही ।
धाक से जिन की धसकती थी धरा ॥

जो बनाते ही बिगड़तों को रहे ।
आप अब वे हैं बिगड़ते जा रहे ॥
रख सके जो लोग मुँह लाली सदा ।
आज हैं वे लोग मुँह की खा रहे ॥

जातियां मुँह जोह जिन का जी सकीं ।
इन दिनों हैं आग वे ही बो रहीं ॥
जग न लेता सांस जिनके सामने ।
आज उनकी सांसतें हैं हो रहीं ॥

फूल जिन पर था बरसता सब दिनों ।
इन दिनों वे धूल से हैं भर रहे ॥
राज पाकर राज जो करते रहे ।
काम अब वे राज का हैं कर रहे ॥

मिल रही है न खाट टूटी भी।
चैन बेचैन बन न क्यों खोते॥
आज हैं फूट फूट रोते वे।
जो रहे फूल-सेज पर सोते॥

बन गये हैं औगुनों की खान वे।
गुन अनूठे हाथ से छुन छुन छिने॥
डालते थे जान जो बेजान में।
आज वे हैं जानवर जाते गिने॥

हैं कलेजा पकड़ पकड़ लेते।
औ सका आंख का न आँसू थम॥
क्या कहें कुछ कहा नहीं जाता।
क्या रहे और हो गये क्या हम॥

काम के कलाम

चेतावनी

पिस रहा है आज हिन्दूपन बहुत।
हिन्दुओं में हैं बुरी रुचियां जगीं॥
ऐ सपूतो, तुम सपूती मत तजो।
हैं तुमारी ओर ही आँखें लगीं॥

हो गया है क्या, समझ पड़ता नहीं।
हिन्दुओ, ऐसी नहीं देखी कहीं॥
खोल कर के खोलने वाले थके।
है तुमारी आँख खुलती ही नहीं॥

हिन्दुओ, जैसी तुमारी है बनी।
बेबसी ऐसी बनी किस की सगी॥
जागने पर जो लगी ही सी रही।
कब किसी की आँख ऐसी है लगी॥

देख कर बेचारपन से तंग को।
आप तुम बेचारपन से मत घिरो॥
हो बचा सकते उन्हें तो लो बचा।
हिन्दुओ, आँखें बचाते मत फिरो॥

छीजते ही जा रहे हो हिन्दुओ।
भाइयों को पाँव से अपने मसल॥
है उसी का मिल रहा बदला तुम्हें।
बेतरह आँखें गई हैं क्यों बदल॥

हिन्दुओ, हाथ पांव के होते।
जब कि है बेबसी तुम्हें भाती॥
तो भला क्यों न फेर में पड़ते।
दैव की आँख क्यों न फिर जाती॥

फल फले बैर फूट के जिस में।
दूध से बेलि वह गई सींची॥
देख कर नीचपन तुम्हारा यह।
हिन्दुओ, आँख हो गई नीची॥

सब जगह बे-जागतों को भी जगा।
आज दिन जो जोत जगती है नई॥
तब भला कैसे हमारे दिन फिरें।
जब हमारी दीठ उस से फिर गई॥

है अगर जीना जियें जीवट दिखा।
या कि अब हम मौत कुत्ते की मरें॥
पिट गये जितना कि पिट सकते रहे।
अब भला रो पीट कर के क्या करें॥

सूझता है यह न क्या है हो रहा।
और लम्बी तान कर हैं सो रहे॥
हाथ धोना सब सुखों से ही पड़ा।
क्या अजब जो आज हैं रो धो रहे॥

थे समझते जाति-हित-रुचि-बेलि को।
कर सकेंगे हम हरी आँसू चुआ॥
वह पनपने भी अगर पाई नहीं।
कुछ न तो रोने कलपने से हुआ॥

जी लगा जाति के सुनो दुखड़े।
सच कहते हुए डिगो न डरो॥
एक क्या लाख जोड़बन्द लगे।
बन्द तुम कान मुँह कभी न करो॥

दम अगर तोड़ना पड़ेहीगा।
किस लिये तो बिचार को छोड़ें॥
क्यों बड़े ही हरामियों का सिर।
तोड़ते तोड़ते न दम तोड़ें॥

घोंटते जो लोग हैं उस का गला।
क्यों नहीं उन का लहू हम गार लें॥
है हमारी जाति का दम घुट रहा।
हम भला दम किस तरह से मार लें॥

धूल में मरदानगी अपनी मिला।
लात हिम्मत को लगा जीते मरें॥
है अगर हम में न कुछ दम रह गया।
तो भरोसा और के दम का करें॥

टूट जावे मगर न खुल पावे।
इस तरह से कमर कसें बांधें॥
जाति का काम साधती बेला।
दम निकल जाय पर न दम साधें॥

छोड़ दें पेचपाच की आदत।
बीच का खींचतान कर दें कम॥
तोड़ कर औ मरोड़ कर बातें।
जाति का क्यों गला मरोड़ें हम॥

है कसर कौन सी नहीं हम में।
है भला कौन इस तरह लुटता॥
जब हमीं घोट घोट देते हैं।
तब गला जाति का न क्यों घुटता॥

जो उन्हें गोद में नहीं लेते।
जो गले से नहीं लगाते हो॥
बेबसों पर छुरी चला कर के।
क्यों गले पर छुरी चलाते हो॥

जो निबाहो नेह के नाते न तुम।
जो न रोटी बाँट कर खाओ जुरी॥
तो छुरी बेढंग आपस में चला।
मत गले पर जाति के फेरो छुरी॥

जो पिलाते बन सके तो दो पिला।
वह निराला जल कि जिस से हो भला॥
प्यास सुख की बेतरह है बढ़ गई।
आस का है सूखता जाता गला॥

तब भला किस तरह बसेंगे हम।
जब कि होवे न देस ही बसता॥
तब हमारा गला फँसेगा ही।
जब कि है जाति का गला फँसता॥

मौत का जो पयाम लाती है।
क्या न है आ रही वही खांसी॥
जब गले फँस गये कुफंदे में।
क्या गले में न तब लगी फांसी॥

चाहिये कुछ दबंगपन रखना।
दब बहुत दाब में न आयें हम॥
बेसबब दबदबा गँवा अपना।
जाति का क्यों गला दबायें हम॥

हैं बुरे फंदे बहुत फैले हुए।
जाल कितने बिछ गये हैं बरमला॥
बेतरह तुम आप भी फँस जावगे।
जाति का हो क्यों फँसा देते गला॥

बात है यह बहुत बड़े दुख की।
हम अगर बेतरह कभी बढ़ दें॥
कूढ़पन बात बात में दिखला।
मूढ़पन जाति के गले मढ़ दें॥

सोच सामान अब करो सुख का।
दुख बहुत दिन तलक रहे चिमटे॥
गा चलो गीत जाति-हित के अब।
गा चुके कम न दादरे खेमटे॥

फिर भला किस तरह हमारी रुचि।
देश-हित राग रंग में रँगती॥
सावनी है सुहावनी होती।
लावनी है लुभावनी लगती॥

जाति-हित के बड़े अनूठे पद।
हम बड़ी ही उमंग से गावें॥
अब बहुत ही बुरी ठसकवाली।
ठुमरियों की न ठोकरें खावें॥

क्यों जगाये भी नहीं हो जागते।
आज दिन सारा जगत है जग गया॥
लाग से ही जाति-हित गाड़ी खिँचे।
लग गया कंधा बला से लग गया॥

क्यों कसकती नहीं कसक जी की।
क्यों खली आज भी न कोर कसर॥
है बुरी चाट लग गई तो क्या।
अब रहें नाचते न चुटकी पर॥

चूकते ही चूकते तो सब गया ।
चूक कर खोना न अब घर चाहिये ॥
नटखटों की चाट, जी की चोट को ।
क्या उड़ाना चुटकियों पर चाहिये ॥

जाति का काम हम किये जावें ।
क्यों लहू से न बार बार सिँचें ॥
बिन गये बाल बाल भी न हटें ।
खिँच गये खाल भी न हाथ खिँचें ॥

हो सका क्या न हौसला बांधे ।
जग गये, कौन सा न भाग जगा ॥
कस कमर कौन काम कर न सके ।
लग गये लाग क्या न हाथ लगा ॥

जाति हित क्यारियां लगे हाथों ।
क्यों नहीं आप सींच लेते हैं ॥
चाहिये इस तरह न खिँच जाना ।
किस लिये हाथ खींच लेते हैं ॥

जाँय कीलें सकल नहों में गड़।
जाति-हित हैासले न हट पावें॥
हाथ लट जाय, शल हथेली हो।
उँगलियां पोर पोर कट जावें॥

कौर मुँह का क्यों न तब छिन जायगा।
जाँयगी पच क्यों न प्यारी थातियां॥
पेट कटता देख जब रो पीट कर।
लोग पीटा ही करेंगे छातियां॥

कढ़ रही हैं तो कढ़ें चिनगारियां।
अब न आँखें नीर बरसाती रहें॥
कूटते हैं तो बदों को कूट दें।
कट मरें, क्यों कूटते छाती रहें॥

हैासले और दबदबे वाला।
क्या नहों है दबंग बन पाता॥
हम किसी की न दाब में आयें।
दिल दबे कौन दब नहीं जाता॥

आज दिन तो दौड़ ही की होड़ है।
फिर हमें है दौड़ने में कौन डर॥
क्या निगाहें भी नहीं हैं दौड़तीं।
दौड़ता है दिल न दौड़ाये अगर ?॥

माल निगला क्यों उगलवा लें न हम।
है हमें कुछ कम न टोटा हो रहा॥
जो निकल पावे निकालें पेट से।
दिन ब दिन है पेट मोटा हो रहा॥

कौड़ियाँ पैसे हमारे क्यों लुटें।
वे रहें कैसे किसी की टेंट में॥
लें उगलवा माल पकड़ें फेंट हम।
पेट में है तो रहे क्यों पेट में॥

दुख न भोगें उखाड़ दें उस को।
है अगर जम गया हिला डालें॥
लाभ क्या टालटूल से होगा।
जो सकें टाल पाँव को टालें॥

नाक रगड़े मिटे नहीं रगड़े।
माथ क्या पाँव पर रगड़ करते॥
दो रगड़ जो रगड़ सको खल को।
पाँव क्या हो रगड़ रगड़ मरते॥

सजीवन जड़ी

दुख बने वह अजब नशा जिस में।
मौत का रूप रंग ही भावे॥
जाति-हित के लिये मरें हँसते।
आह निकले न, दम निकल जावे॥

काम लेते जो विचारों से रहे।
हाथ वे बेसमझियों के कब बिंके॥
जो छिँके जी की कचाई से नहीं।
छेंकने से छींक के वे कब छिँके॥

हौसलेवाले हिचिकते ही नहीं।
राह चाहे ठीक या बेठीक हो॥
हो सगुन या काम असगुन से पड़े।
दाहिने हो या कि बायें छींक हो॥

पड़ गये हो उधेड़बुन में क्यों।
तुम गये बार बार बीछे हो॥
कब सके बीर पाँव पीछे रख।
सैकड़ों छींक क्यों न पीछे हो॥

करतबी की देख नाकाबंदियां।
छुक गई सी है निकल पाती नहीं॥
छींकनेवाले करें तो क्या करें।
छींकते हैं छींक ही आती नहीं॥

दूर अंधाधुंध जिस से हो सके।
बाँध कर के धुन वही धंधा करें॥
जाति की औ देस की सेवा सदा।
लोग कंधे से मिला कंधा करें॥

बीज जब थे बिगाड़ का बोते।
किस तरह प्यार बेलि उग पाती॥
जब कि हम बात बात में बिगड़े।
बात कैसे न तब बिगड़ जाती॥

जब मनाने ही हमें आता नहीं।
तब सकेंगे किस तरह से हम मना॥
कब भला बनती किसी से है बने।
बात बनती ही नहीं बातें बना॥

मान, जिन का मान रख कर के मिला।
मत बिगाड़ो मान का उन के धुरा॥
है बिना हारे हराना आप को।
है बड़ों की बात दोहराना बुरा॥

तब बखेड़े किस तरह उठते नहीं।
जब बखेड़ों का रहा जी में न डर॥
बात तब कैसे भला बढ़ती नहीं।
बात बढ़ बढ़ कर, रहे करते अगर॥

क्यों नहीं तब जायगा कोई उखड़।
बात हम उखड़ी हुई जब कहेंगे॥
रिस लहर कैसे न तब बढ़ जायगी।
बात को जब हम बढ़ाते रहेंगे॥

है बहुत वाजिब बहुत ही ठीक है।
बाँट में बेढंग के जो पड़ गई॥
तब भला वह किस तरह जी में जमे।
जब बनाई बात ही बेजड़ गई॥

तो उछल कूद क्या रहे करते।
जो किया छोड़ छल न देस भला॥
सब बला टाल देस के सिर की।
जो कलेजा न बल्लियों उछला॥

जाति-हित की अगर लगी लौ है।
तो करें काम बेबहा हाथों॥
हौसला हो छलक रहा दिल में।
हो कलेजा उछल रहा हाथों॥

लोक-हित में कब लगे जी जान से।
कब लगा प्यारा न परहित से टका॥
देस सुत्र मुख देख कमलों सा खिला।
कब कलेजा है उछल बाँसों सका॥

हो भला, वह हो भलाई से भरा।
भाव जो जी में जगाने से जगे॥
जातिहित जनहित जगतहित में उमग।
जो लगायें जो लगाने से लगे॥

क्यों सितम पर सितम न हो हम पर।
क्यों बला पर बला न आ जाये॥
घेर घबराहटें न लें हम को।
जी हमारा न नेक घबराये॥

क्या नहीं हाथ पाँव हम रखते।
एक बेपीर क्यों हमें पीसे॥
फिर हमें जो लगी लगी तो क्या।
आज भी जो लगी नहीं जी से॥

जी ठिकाने है अगर रहता नहीं।
चुटकियों पर तो मुहिम होगी न सर॥
तो उड़ेंगे फूंक से दुखड़े नहीं।
जी हमारा है उड़ा रहता अगर॥

सूरमा साहस दिखा कर सैागुना।
कौन सा पाला नहीं है मारता॥
तो हरायें भूल कर उस को न हम।
जी हराये ही अगर है हारता॥

चोचलों की चली नहीं सब दिन।
काम का ही जहान है खोजी॥
अब नहीं लाड़ प्यार के दिन हैं।
जी लड़ायें लड़ा सकें जो जी॥

है अगर आगे निकलना चाहता।
तो किसे पीछे नहीं है छोड़ता॥
देख लेवें लोग दौड़ा कर उसे।
दौड़ने पर जी बहुत है दौड़ता॥

धीर होते कभी अधीर नहीं।
क्यों न सिर पर बिपत बितान तने॥
हाथ का आँवला न है अवसर।
बावला मन उतावला न बने॥

काम से मोड़ें न मुँह, तोड़ें न दम।
चाम तन का क्यों न छुन छुन पर छिले॥
हिल गये दिल भी न, हिलना चाहिये।
जाँय हिल क्यों पेट का पानी हिले॥

जो गिरें टूट टूट तन रोयें।
जग उठें और जाति जय बोलें॥
बन अमर देस-हित रहें करते।
मर मिटें पर कमर न हम खोलें॥

फूट घर में न फैलने पावे।
फूट कर भी न आँख फूट सके॥
टूट में जाय पड़ नहीं कोई।
टूट कर भी कमर न टूट सके॥

सब दिनों दुख पोसता जिन को रहा ।
मुँह पराया ताक कर ही वे पिसे ॥
वह कमाई कर कभी हारा नहीं ।
जांघ का अपनी सहारा है जिसे ॥

वह जिसे सामने सदा लाई ।
है नहीं अंत उस समाई का ॥
नाम कर काम का बना देना ।
काम है जांघ की कमाई का ॥

जी लगा काम औ कमाई कर ।
हो गये कामयाब माहिर सब ॥
हैं जवाहिर न जौहरी के घर ।
जांघ में हैं भरे जवाहिर सब ॥

छल कपट के हाथ से छूटे रहें ।
पाँव मेरे तो कहीं कैसे छिकें ।
कर न दें तलबेलियां बेकार तो ।
धार पर तलवार की तलवे टिकें ॥

बूते की बात

चाहिये आँखें खुली रखना सदा।
दुख सकेंगे टल नहीं आँखें ढके॥
सूख जाते हैं बिपद को देख जब।
किस तरह से सूख तब आँसू सकें॥

जाँयगे पेच पाच पड़ ढीले।
छेद देगा कुढंग बरछी ले॥
खोज कर के नये नये हीले।
आँख से आँख लड़ भले ही ले॥

देख कर के ही किसी ने क्या किया।
सांसतें सह जातियां कितनी मुईं॥
तब हुआ क्या बाहरी आँखें बचे।
जबकि आँखें भीतरी अंधी हुईं॥

हो बुरा उन कचाइयों का जो।
पत उतारे बिना नहीं मुड़तीं॥
जब हवा आप हो गये हम तो।
क्यों न मुँह पर हवाइयां उड़तीं॥

आ रही हैं जम्हाइयां यों क्यों।
काम क्यों बीर की तरह न करें॥
हैं उबरते अगर उबर लेवें।
सांस हम ऊब ऊब कर न भरें॥

और बातें भूल दें तो भूल दें।
चोट जी की किस तरह है भूलती॥
हैं बरसते फूल सांसत में नहीं।
फिर किसी की सांस क्यों है फूलती॥

मर मिटें पर काम से मोड़ें न मुँह।
आ बने जी पर मगर सच्ची कहें॥
सांसतें सह छोड़ दें साहस नहीं।
सांस रहते तक उबरते हम रहें॥

हो भला जिस से वही जी से करें ।
पीटते हैं हम पुरानी लीक क्या ॥
सांस क्यों लें जाति-हित करते चलें ।
सांस आई या न आई ठीक क्या ॥

लोक-हित के लिये बढ़े जब तो ।
पाँव पीछे कभी न टल जावे ॥
हम भली राह से निकल न भगें ।
क्यों नहीं सांस ही निकल जावे ॥

सब तरह से न जाँय जुट जब तक ।
जीत तब तक न हाथ आती है ॥
आस कैसे न टूट जाती तब ।
सांस जब टूट टूट जाती है ॥

खुल कहें और बार बार कहें ।
बात वाजिब सदा कही जावे ॥
बन्द तब तक न मुँह करें अपना ।
सांस जब तक न बन्द हो जावे ॥

चुभते चौपदे

जब निकल ऐंठ ही गई सारी।
तब भला मूंछ किस लिये ऐंठे॥
बैठती आन बान से तो क्यों।
बात बैठी अगर चपत बैठे॥

बाँह के बल को समझ को बूझ को।
दूसरों ने तो बँटाया है नहीं॥
धन किसी का देख काटें होठ क्यों।
हाथ तो हम ने कटाया है नहीं॥

कौड़ियों पर किस लिये हम दांत दें।
है हमारा भाग तो फूटा नहीं॥
क्या हुआ जो कुछ हमें टोटा हुआ।
है हमारा हाथ तो टूटा नहीं॥

जो सदा हैं बखेरते कांटे।
दे सके वे न फूल के दोने॥
क्यों भला काम लें न ढाढ़स से।
क्यों लगें ढाढ़ मार कर रोने॥

हौसलों के बने रहें पुतले।
हार हिम्मत कभी न हम हारें॥
काम मरदानगी दिखा साधें।
मार मैदान लें, न मन मारें॥

भेद दिल का उन्हें नहीं मिलता।
हैं नहीं जो टटोल दिल पाते॥
पेट की बात जानना है तो।
पेट में पैठ क्यों नहीं जाते॥

सूझ बूझ

उलझनों को बढ़े बखेड़ों को।
सैकड़ों टालटूल कर टालें॥
बात जो भेद डाल दे उस को।
जो सकें डाल पेट में डालें॥

तो बखेड़े करे बहुत से क्यों।
जो कहे बात, बात हो पूरी॥
काम हो कान के उखेड़े जो।
तो घुसेड़े न पेट में छूरी॥

तो न तकरार के लिये ललकें।
जो बला प्यार से टले टाले॥
जो चले काम पेट में पैठे।
तो न तलवार पेट में डाले॥

दांत तो तोड़ किस लिये देवें।
जो दबायें न दुख रही दाढ़ें॥
काढ़ कांटा न जो सकें दिल का।
तो किसी की न आँख हम काढ़ें॥

भागने में अगर भलाई है।
क्यों भला जी न छोड़ कर भागूं॥
मांगने से अगर मिले हम को।
क्यों न जी की अमान तो मांगूं॥

तो चलें चाल किस लिये गहरी।
बात देवें सँभाल जो खटके॥
तो पटकने चलें न सिर अपना।
काम चल जाय पाँव जो पटके॥

आप अपने लिये बला न बनें।
जो न सिर पर पड़ी बला टालें॥
लाग से लोग जल रहे हैं तो।
पाँव अपना न आग में डालें॥

पते की बातें

क्यों जम्हाई आ रही है बेतरह।
इस तरह से आँख क्यों है झप रही॥
देख लो सब ओर क्या है हो रहा।
बात सुन लो, आँख खोलो तो सही॥

जाति को है अगर जिला रखना।
तो न मीठी को मान लें खट्टी॥
भेद का बांध बांधती बेला।
आँख पर बांध लें न हम पट्टी॥

जोत में आइये जतन करिये।
जागिये हो रहा सबेरा है॥
बन गये हैं इसी लिये अंधे।
आँख के सामने अँधेरा है॥

हैं बड़े ही कपूत कायर हम।
जो बुरी तेवरियां हमें न खलें॥
ठोकरें देख जाति को खाते।
ठीकरी आँख पर अगर रख लें॥

तो बला यों न बेलती पापड़।
पाँव जाता न यों दुखों का जम॥
तो न खुल खेलती मुसीबत यों।
जो खुला आँख कान रखते हम॥

देख कर भी न देख जो पावें।
वे सजग और ढंग से हो लें॥
खुल सकें या न खुल सकें आँखें।
क्या खुली बात को भला खोलें॥

सार को प्यार जो नहीं करते।
क्यों न रुचतीं उन्हें घुनी बातें॥
वे गुनी की गुनी सुनें कैसे।
जब सुनी हैं बनी चुनी बातें॥

छेदने बेधने बहँकने से।
काम लेवें न मुँह अगर खोलें॥
जाति को है सँभाल लेना तो।
जीभ को हम सँभाल कर बोलें॥

है घड़ा जो नहीं भरा पूरा।
क्यों न तो बार बार वह छलके॥
जाति-हित का सवाल कोई भी।
कर सके हल न पेट के हलके॥

सुन सके बात हित भरी वे ही ।
हैं न जो लोग कान के बहरे ॥
क्यों कहें वे न पेट की बातें ।
हैं न जो लोग पेट के गहरे ॥

हम निबल भूल पर बहुत बिगड़े ।
पर सबल के सितम हुए न जगे ॥
लग गये पाँव क्यों गये जल भुन ।
लग गई क्यों न आग लात लगे ॥

सुधार की बातें

तब भला क्या सुधर सकेंगे हम ।
जब कि सुनते सुधार नाम जले ॥
देखने के समय कसर अपनी ।
छा गया जब अँधेरा आँख तले ॥

अनसुनी कर सुधार की बातें।
कूढ़ कैसे भला कहलवा लें॥
खोट रह जायगी उसे न सुने।
कान का खोंट हम निकलवा लें॥

जो जियें जाति को निहार जियें।
जो मरें जाति को उबार मरें॥
हैं यही तो सुधार की बातें।
कान क्यों बार बार बन्द करें॥

पार हो नाव डूबती जिस से।
जब नहीं ब्योंत वे बता देते॥
तब सुने नाम ही सुधारों का।
लोग क्यों जीभ हैं दबा लेते॥

हर तरह की बिगाड़ की बातें।
हैं दिलों में सुधार बन पैठी॥
सब घरों में खड़े बखेड़े हैं।
फूट है पाँव तोड़ कर बैठी॥

भाग

हैं पड़े भूल के भुलावों में।
कब भरम ने भरम गँवा न ठगा॥
क्या कहें हम अभाग की बातें।
आज भी भाग भूत भय न भगा॥

बिन उठाये न जायगा मुँह में।
सामने अन्न जो परोसा है॥
है भरी भूल चूक रग रग में।
भाग का ही अगर भरोसा है॥

जब बने तो बने गये बीते।
काहिली हो सकी न जौ भर कम॥
भाग कैसे अभाग तब पावे।
जब रहे भाग के भरोसे हम॥

पा सके जो जहान में सब कुछ।
क्या न थे वे उपाय कर करते॥
हैं उमगते उमंग में भर जो।
दम रहे भाग का न वे भरते॥

पाँव पर अपने खड़े जो हो सके।
ताक पर-मुख वे सभी सहते नहीं॥
बाँह के बल का भरोसा है जिन्हें।
वे भरोसे भाग के रहते नहीं॥

बीर हैं तदबीर से कब चूकते।
करतबी करतब दिखाते कब नहीं॥
भाग वाले हैं जगाते भाग को।
भाग की चोटें अभागों ने सहीं॥

क्यों न रहती सदा फटी हालत।
पास सुख किस तरह फटक पाता॥
करतबों से फटे रहे जब हम।
भाग कैसे न फूट तब जाता॥

है नहीं जब लाग जी से लग सकी ।
लाभ तो होगा नहीं मुँह के तके ॥
जब जगाने से नहीं जीवट जगी ।
भाग कोई जाग तब कैसे सके ॥

देख करतूत की कमर टूटी ।
बेहतरी फूट फूट कर रोई ॥
जब न हित आँख खुल सकी खोले ।
किस तरह भाग खुल सके कोई ॥

हम अगर हाथ पाँव डाल सके ।
तब कुदिन पीस क्यों नहीं पाता ॥
फट पड़ा जब अभाग का पर्वत ।
भाग कैसे न फूट तब जाता ॥

मेल जोल

तो कहेंगे मिलाप परदे में ।
है बुरी मौत की हुई संगत ॥
रंग बदरंग कर हमारा दे ।
जो किसी मेल जोल की रंगत ॥

लाख उन को रहें मिलाते हम ।
हैं न बेमेल मन मिले रहते ॥
है मुलम्मा किया हुआ जिस पर ।
मेल उस मेल को नहीं कहते ॥

प्यार कहला कर किसी का प्यार क्यों ।
काम हित जड़ के लिये दे तेल का ॥
जो हमें बेमोल करता ही रहे ।
कुछ नहीं है मोल ऐसे मेल का ॥

मिल गये पर चाहिये फटना नहीं ।
ते परस्पर हों निछावर जो हिलें ॥
कुछ न फल है दूध काँजी सा मिले ।
जो मिलें ते दूध जल जैसा मिलें ॥

एक रंगत में न रँग पाई अगर ।
साथ दे कलियां खिलीं, ते क्या खिलीं ॥
जब मिलाने से नहीं मिल मन सका ।
तब मिलीं दे जातियां ते क्या मिलीं ॥

वह न खेला जाय जिस में हो कपट ।
क्यों न कितना ही निराला खेल हो ॥
कल्ह मिलते आज मिट्टी में मिले ।
जो न मालामाल हित से मेल हो ॥

तात जल जो मिलन-लता का है ।
और है जो कि हित-कमल पाला ॥
मेल उस मेल का कहें कैसे ।
है न जो प्यार-बेलि का थाला ॥

हाथ धो बैठे धरम से किस लिये ।
मुँह हमारे क्यों सहम करके सिलें ॥
ला मुसीबत माल पर पामाल हो ।
धूल में क्यों मेल के नाते मिलें ॥

क्यों मलामत हम करें उस की नहीं ।
मेल कर बेमैल जो होवे न मन ॥
जो हमें मेली दिये जैसा मिले ।
हो फतिंगे के मिलन सा जो मिलन ॥

धूल में जाय मिल मिलन वह जो ।
मसलहत का महँग मसाला हो ॥
प्यार जो प्यार मतलबों का हो ।
मेल जो मोल जोल वाला हो ॥

है भला मेल मेल वालों का ।
जल गया बल गया चला बल क्या ॥
एक बेमेल बेदहल लौ से ।
मेल कर तेल को मिला फल क्या ॥

है बुरा बरबादियों का है सगा।
बैर जो हो प्रीति-पागों में पगा॥
प्यार-परदे में परायापन छिपा।
मैल जी का मेल रंगत में रँगा॥

मिल, न उस को क्यों मुसीबत की कहें।
जो मिलन लेने न देवे कल हमें॥
बेतरह जो मुँह मुरौअत का मले।
दे गिरा जो मेल मुँह के बल हमें॥

किस तरह से हम मिलन उसको कहें।
जो कि दो बेमेल मन का खेल हो॥
क्यों न वह होगा मलालों से भरा।
मामलों के ही लिये जो मेल हो॥

मतलबों की मलाल की जिस पर।
है जमी एक एक मोटी तह॥
हम उसे कह मिलन नहीं सकते।
है न वह मेल है मिलाप न वह॥

सबल निबल

जब न संगत हुई बराबर को।
तब भला कब बराबरी न छकी॥
साथ सूरज हुए चमकता क्या।
चाँद की रह चमक दमक न सकी॥

जो कड़ाई मिल सकी पूरी नहीं।
क्यों न चन्दन की तरह घिस जाँयगे॥
आप हैं संगीन वैसे हम न तो।
संग कर के संग का पिस जाँयगे॥

कर सबल संग कब निबल निबहा
कब सितम के उसे रहे न गिले
भेड़ियों से पटी न भेड़ों की।
बाघ बकरे हिले मिले न मिले॥

किस तरह उस की न छिन जाती कला ।
कब सबल लाये न निबलों पर बला ॥
क्यों न जाती धूप में मिल चाँदनी ।
चाँद सूरज साथ क्या करने चला ॥

जब निबल हो बने सबल संगी ।
तब पलटते न किस तरह तखते ॥
तो चले क्यों बराबरी करने ।
बल बराबर अगर नहीं रखते ॥

घट गये, मान घट सके कैसे ।
बाँट में बाट जब समान पड़े ॥
तौल में कम कभी नहीं होंगे ।
दो बराबर तुले हुए पलड़े ॥

पेड़ देखे गये नहीं पिसते ।
जब पिसी तब पिसी नरम पत्ती ॥
लौ दमकती रही दमक दिखला ।
बैल गया तेल जल गई बत्ती ॥

चाल चल चल निगल निगल उन को।
हैं बड़ी मछलियां बनी मोटी॥
सौ तरह से छिपीं लुकीं उछलीं।
छूट पाईं न मछलियां छोटी॥

बिल्लियों से चली न चूहों की।
छिपकली से सके न कीड़े पल॥
कब निबल पर बला नहीं आती।
है बली कब नहीं दिखाता बल॥

धूप जितनी चाहिये उतनी न पा।
निज हरापन छोड़ हरिआते नहीं॥
उग रहे पौधे पवन अपनी छिने।
पास पेड़ों के पनप पाते नहीं॥

हैं न काँटों से छिदी कब पत्तियां।
कब लता को लू लपट खलती नहीं॥
मालिनों से कल न कलियों को मिली।
मालियों से फूल की चलती नहीं॥

पत्थरों को नहीं हिला पाती।
पत्तियां तोड़ तोड़ है लेती॥
है न पाती हवा पहाड़ों से।
पेड़ को है पटक पटक देती॥

है हवा खेलती हिलोरों से।
बुलबुले के लिये बलाती है॥
फूल को चूम चूम लेती है।
ओस को धूल में मिलाती है॥

मारता कौन मारतों को है।
पिट गये कब नहीं गये बीते॥
हैं हरिन ही चपेट में आते।
बाघ पर टूटते नहीं चीते॥

संगदिल से मिला नरम दिल क्या।
प्रेम के काम का न है कीना॥
संग टूटा न संग से टकरा।
हो गया चूर चूर आईना॥

सजीवन बूटी

दिल के फफोले

पौ फटी है निकल रहा सूरज।
हैं सभी लोग ढंग में ढलते॥
देख करके मलाल होता है।
आप हैं आँख ही अभी मलते॥

लड़ पड़े पोत के लिये सग से।
दूसरे लूट ले चले मोती॥
एक क्या लाख बार देखे भी।
आँख इस की हमें नहीं होती॥

दिन गये सिंह मार लेने के।
है भला कौन मार मन पाता॥
मारते हैं जमा पराई अब।
है हमें आँख मारना आता॥

साँसतें देख देख अपनों को।
चोट जी ने न भूल कर खाई॥
डूबता देख जाति का बेड़ा।
कब कभी आँख डबडबा आई॥

दिन ब दिन हम घट रहे हैं तो घटें।
लुट रही हैं तो लुटें पौधें नई॥
कुछ न चारा है बिचारी क्या करे।
जाति की है आँख ही चरने गई॥

क्या कहें किस से कहें जायें कहां।
हैं बिगड़ते कुछ भी बन आई नहीं॥
दौड़ में हम हैं बहुत पीछे पड़े।
पर किसी ने आँख दौड़ाई नहीं॥

ठोंक कर के या कि दे दे थपकियां।
और भी दें नौनिहालों को सुला॥
खुल रहा है दिन ब दिन परदा मगर।
आँख का परदा नहीं अब भी खुला॥

रंग बिगड़ा कम न, बेसमझी मगर।
रंग में अपने सदा भूली रही॥
हैं हमीं कुछ इस तरह के सिर-फिरे।
आँख में सरसों सदा फूली रही॥

जिन दिनों लू से लपट से धूप की।
फूल पत्ता है झुलसता जा रहा॥
आँख में ही कुछ कसर है, उन दिनों।
आँख में टेसू अगर फूला रहा॥

फिर नहीं तो कलंक के धब्बे।
जाति क्यों जी लगा नहीं धोती॥
अह भला देख कुछ सके कैसे।
आँख ही है जिसे नहीं होती॥

तुल गई ढील लील लेने को।
सूझ तब भी सबील पर न तुली॥
बंध गये, और हैं बंधे जाते।
पर बंधी दीठ आज भी न खुली॥

तो बुरी दीठ किस तरह लगती।
किस लिये आग जाति में बोती॥
जो किसी देव-दीठ वाले की।
दीठ से दीठ जुड़ गई होती॥

दुख पड़े पर ठीक वह सँभली नहीं।
राह उस ने कब सजग होकर गही॥
चूक अपनी कब समय पर देख ली।
दीठ सब दिन चूकती ही तो रही॥

अब न धन है न मान ही वह है।
और क्या क्या कहां कहां खोवें॥
लाख में एक लख पड़ा न हितू।
हम न कैसे बिलख बिलख रोवें॥

पाट सकते एक नाली भी नहीं।
रीस उन की जो नदी हैं पाटते॥
काटते हैं हौंठ उन को देख कर।
कान उन का क्या भला हम काटते॥

जाति का ढाढ़ मार कर रोना।
देस पर है बिपत्तियां ढाता॥
सुन उसे कान के फटे परदे।
कान अब तो दिया नहीं जाता॥

हैं हमारे न कारनामे कम।
फूट के बीज बेतरह बोये॥
जाति को भेज कर रसातल में।
कान में तेल डाल कर सोये॥

कुछ अजब हाल है बतायें क्या।
खुल न आँखें सकीं न उमगा मन॥
आ हरापन सका न चेहरे पर॥
जा सका कान का न बहरापन॥

दुख पड़े घुल गया बदन सारा।
जाति में वह रहा जमाल कहां॥
है नहीं वह हरा भरा चेहरा।
अब रहा लाल लाल गाल कहां॥

एक है बातें बनाने में फँसा।
एक है बेढंग झुँझलाया हुआ॥
हैं कहां वे आप कुम्हला जाँय जो।
जाति का मुँह देख कुम्हलाया हुआ॥

एक क्या लाख बार जान पड़ा।
है न हम से जहान में कायर॥
नाच हम ने न कौन सा नाचा।
कब तमाचा न खा लिया मुँह पर॥

जब कभी जाति के दुखों पर हम।
आँख अपनी पसार देते हैं॥
है बुरा हाल सोच से होता।
नोच मुँह बार बार लेते हैं॥

कर थके सैकड़ों जतन, पर जी॥
जाति हित में कभी नहीं सनता।
देखते लोग हैं हमारा मुँह॥
मुँह दिखाते हमें नहीं बनता।

इस सितम संगीन साँसत से कहीं ॥
आज तक कोई छिका नाका नहीं।
क्यों कहें, दिल के फफोलों की टपक ॥
टूट मुँह का तो सका टाँका नहीं।

आँख जो काढ़ी गई आँसू कढ़े ॥
जी चुराने के लिये जो जी गया।
तो सितम औ साँसतों की हद हुई ॥
सी कहे जो मुँह किसी का सी गया।

क्या दबायेंगे भला वे और को ॥
आप ही जो दूसरों से दब चले।
रख सकेंगे दाव वे कैसे भला।
दाब लें जो दूब दाँतों के तले ॥

किस तरह रंग तब चढ़े पक्का।
जब कि कच्चा न रंग ही छूटा ॥
किस तरह दाँत तब मिलें सच्चे।
दाँत ही जब न दूध का टूटा ॥

धूम के साथ धाकवालों ने।
हैं दिये धाक के लिये धोखे॥
और का चीख चीख कर लोहू।
दाँत किस के न हो गये चोखे॥

जी हमारा बहुत गया कुम्हला।
जी कहां से खिला हुआ ले लें॥
है न हँसते न खेलते बनता।
हम भला किस तरह हँसें खेलें॥

झेलते योंहीं रहेंगे क्या सदा।
आज दिन हैं जिस तरह दुख झेलते॥
क्या न खेलेंगे हँसेंगे उस तरह।
हम रहे जैसे कि हँसते खेलते॥

हम जिसे खोल भी नहीं सकते।
किस तरह से भला उसे खोलें॥
बेतरह जब पिटा लिया उस को।
कौन मुँह से भला हँसें बोलें॥

मान मरजादा मिटा कर जाति की।
इस जगत में जो जिये तो क्या जिये॥
नाम की वह प्यास मिट्टी में मिले।
जो कि बुझ पाई न बातों के पिये॥

नीच को तो बिठा लिया सिर पर।
ऊंच की चोटियां गईं नोची॥
हो गया दूर जाति का सब दुख।
दूर की बात है गई सोची॥

भूख कितनों का लहू है पी रही।
रोग कितनों का लहू हैं गारते॥
लोग हैं बेमौत लाखों मर रहे।
हम नहीं हैं आह तब भी मारते॥

जा रही हैं सूखती सारी नसें।
पर लगी जोंकें गईं खींची नहीं॥
बेतरह है जाति का खिंचता लहू।
आह हम ने आज भी खींची नहीं॥

दिल हुआ ठंढा, लहू ठंढा हुआ।
देख ठंढे आँख की ठंढक बढ़ी॥
हो चले हम बेतरह ठंढे मगर।
आह ठंढी तो नहीं अब भी कढ़ी॥

किस तरह वे उन्हें जलायेंगी।
जो सितम ढूंढ ढूंढ कर ढाहें॥
जब हमीं में न रह गई गरमी।
क्या करेंगी गरम गरम आहें॥

जाति-बेचैनियां हमें अब भी।
आह! निज रंग में नहीं रँगतीं॥
तार बँधता न आँसुओं का है।
आज भी हिचकियां नहीं लगतीं॥

रंगरलियों की जहाँ पर धूम थी।
आँसुओं की है बही धारा वहाँ॥
आज गरदन बेतरह है नप रही।
पर हमारी फिर सकी गरदन कहाँ॥

क्या बखेड़े हैं नहीं पीछे पड़े।
क्या कड़ी आँखें न दुखड़ों की लखी॥
धार तीखी क्या कँपाती है नहीं।
क्या उठी तलवार गरदन पर रखी ?॥

जाति-हित-गाड़ी न दलदल से कढ़ी।
चाहिये था जो न करना वह किया॥
जब कि कंधा था लगाना चाहता।
आह! हम ने डाल तब कंधा दिया॥

घिस चुके जितना कि घिस सकते रहे।
लाभ क्या अब एड़ियां अपनी घिसे॥
आग ही उस पीसने में जाय लग।
जिस पिसाई में पड़े उँगली पिसे॥

कम नमूने न हैं मुसीबत के।
कम सितम के बने न साँचे हैं॥
आज तो वे तमक तमक कर के।
बेतरह मारते तमाचे हैं॥

आज हूँ बार बार मैं गिरता।
सामने हैं बहुत बुरे नाले॥
थामते हाथ क्यों नहीं मेरा।
हैं कहाँ हाथ थामनेवाले॥

कौन सा कारबार छूट सका।
है बहुत अबतरी नहीं जिस में॥
क्या बचा रह गया बिचार करें।
मौत का हाथ है नहीं किस में॥

लोग बेजान बन गये जब हैं।
जब मरे मन मिले, न जाग जगे॥
तब हमारे हरेक मनसब पर।
क्यों मुहर मौत हाथ की न लगे॥

क्यों न तो मेल जोल लुट जाता।
एकता क्यों न छटपटा जाती॥
देख कर नाक जाति की छिदती।
छरछराती अगर नहीं छाती॥

आप अपनी जड़ हमीं जब खोद दें ।
किस तरह हम तब भला फूलें फलें ॥
जब दलाते हैं हमीं दिल थाम तो ।
लोग कोदो क्यों न छाती पर दलें ॥

बेतरह टूट टूट करके हम ।
हो रहे हैं समान रेजे के ॥
पास होते हुए कलेजा भी ।
हैं हमीं लोग बे कलेजे के

कब सताये गये नहीं दुखिये ।
ला उन्हीं पर सका बला बिल भी ॥
बाल ही है पका नहीं मेरा
देखते देखते पका दिल भी ॥

रुक सके रोके न परहित के लिये ।
जातिहित पर ठीक जम पाये नहीं ॥
देसहित पथ पर थमा कर थक गये ।
ए हमारे पाँव श्रम पाये नहीं ॥

क्या बचा छोड़ एक लोप ललक।
आ गई अबतरी नहीं जिस में॥
खोल कर आँख की पलक देखें।
है नहीं मौत की झलक किस में॥

अपने दुखड़े

जब कि जीना न रह गया जीना।
तब भला है कि मौत ही आती॥
जब कि उठना बहुत सताना है।
आँख तो बैठ क्यों नहीं जाती॥

वार करना भी जिन्हें आता नहीं।
चल सकी तलवार उन की कब कहीं॥
सिर उठा कैसे सकेंगे वे भला।
आँख अपनी जो उठा सकते नहीं॥

जब कि दबते गये दबाने से।
लोग कैसे न तब दबावेंगे॥
जब कि हम आँख देख लेवेंगे।
लोग आँखें न क्यों दिखावेंगे॥

दौड़ में सब जातियां आगे बढ़ीं।
पेट में सब के पड़ी है खलबली॥
आज भी हम करवटें हैं ले रहे।
खुल सकीं खोले न आँखें अधखुली॥

काटने से कट न दुख के दिन सके।
यों पड़े कब तक रहें काँटों में हम॥
आज भी जी का नहीं काँटा कढ़ा।
है खटकता आँख का काँटा न कम॥

रह गई अब न ताब रोने की।
दर दुखों का कहाँ तलक मूँदें॥
कम निचोड़ी गईं नहीं आँखें।
आँसुओं की कहाँ मिलें बूँदें॥

जाति का दिन फिरा जिन्हें पाकर।
जो न फरफंद के रहे नेही॥
हैं बिपद फेरफार में फँस कर।
मुँह फुलाये फिरें अगर वे ही॥

सुन सके तो किस तरह से सुन सके।
कान में जब तेल ही डाला रहा॥
खुल सके तो किस तरह से खुल सके।
जब किसी मुँह में लगा ताला रहा॥

हो बुरा उन कचाइयों का जो।
पत उतारे बिना नहीं मुड़तीं॥
जब हवा आप हो गये हम तो।
क्यों न मुँह पर हवाइयाँ उड़तीं॥

पेट कैसे न तब भला ऐंठे।
जब कि हैं मल भरी हुई आँतें॥
तो न क्यों जाति पेच में पड़ती।
जो रुचीं पेचपाच की बातें॥

दिन अगर लाग डाँट में बीतें।
तो कटें खींच तान में रातें॥
आज हैं दिल मिले अलग होते।
हैं कहां मेल जोल की बातें॥

जब कि नामरदी पड़ी है बाँट में।
क्यों न तब मरदानपन की जड़ खने॥
तब भला मरदानगी कैसे रहे।
मूंछ बनवा जब मरद अमरद बने॥

है भला और क्या हमें आता।
दूसरी बात और क्या होती॥
हँस दिये देख सूरतें हँसती।
रो दिये देख सूरतें रोती॥

किस लिये इस तरह गया पकड़ा।
इस तरह क्यों अभाग आ टूटा॥
जायगा छूट या न छूटेगा।
आज तक तो गला नहीं छूटा॥

जी गया ऊब कर जतन कितने।
जा रहा है बुरी तरह जकड़ा॥
है कुदिन ने बुरी पकड़ पकड़ी।
है गया बेतरह गला पकड़ा॥

जो बुरा हो चाहते, कर लो बुरा।
क्या भलाई कर नहीं देगा भला॥
बंधनों को खोलते हैं दूसरे।
बाँध दो जो बाँध देते हो गला॥

कौन किस की भला पुकार सुने।
कौन किस के लिये भला आये॥
देखते आँख फाड़ फाड़ रहे।
हम गला फाड़ फाड़ चिल्लाये॥

घिर गये बेतरह बिपत-बादल।
मच गई लूट, पत गई लूटी॥
कूटते क्यों न तब फिरें छाती।
फूटते आँख बाँह भी टूटी॥

हाल अब तो लिखा नहीं जाता ।
आज दिन बात है सभी बदली ॥
पक गया जी, बहक गया है मन ।
थक गया हाथ, घिस गई उँगली ॥

है जहां पर पेट भी पलता नहीं ।
किस तरह सुख से वहां कोई जिये ॥
क्यों वहां पर चैन मिल पाये जहां ।
है चपत चलता चपाती के लिये ॥

तब थमेगी किस तरह संजीदगी ।
थामने से मन न जब थमता रहा ॥
तब हमारी किस तरह चांदी रहे ।
जब कि चांदी पर चपत जमता रहा ॥

है मुसीबत बेतरह पीछे पड़ी ।
हैं नहीं सामान बचते साथ के ॥
हाथ मल मल कर न क्यों पछताँय हम ।
उड़ गये तोते हमारे हाथ के ॥

टूटने की ब्योंत बहुतेरी हुई।
पर बुरा बंधन तनिक टूटा नहीं॥
छूटते तो किस तरह हम छूटते।
जब हमारा हाथ ही छूटा नहीं॥

बेतरह है गला बँधा अब भी।
है न रस्सी कमरबँधी छूटी॥
पाँव की बेड़ियाँ न खुल पाईं।
हथकड़ी हाथ की नहीं टूटी॥

टूट पाये न जाल दुखड़ों के।
उलझनों के नुचे न झोले हैं॥
खोलते खोलते पड़े फंदे।
पड़ गये हाथ में फफोले हैं॥

मन हमारा रहा नहीं बस में।
और कस में रही नहीं काया॥
है इसी से बसर नहीं होती।
रह सका हाथ का न सरमाया॥

देख करके नौजवानों की बहँक।
सिरधरों की बात सुन कर अटपटी॥
देख कर टूटा हुआ दिल जाति का।
भाग ही फूटा न, छाती भी फटी॥

क्यों भला बेताबियां बढ़तीं नहीं।
बेतरह लूटे गये, बेढब पिटे॥
तब भला जी जाय क्यों छितरा नहीं।
जब कि छाती में रहें काँटे छिटे॥

हो गये शल हाथ सब तदबीर के।
घट गया बल, पड़ गई पीछे बला॥
हम उबर पाये न सिर के बार से।
बोझ छाती का नहीं टाले टला॥

उस बहुत ही बुरे बसेरे में।
है जहां बैर फूट का डेरा॥
जाति को देख बेधड़क जाते।
हैं कलेजा धड़क रहा मेरा॥

चाहिये था कि जाति का बेड़ा ।
रह सजग ढंग से सँभल खेते ॥
देख गिरदाब में गिरा उस को ।
हैं कलेजा पकड़ पकड़ लेते ॥

सामने से बहाव जो आया ।
बह उसी में गई, न पाई थम ॥
देख यह जाति की बड़ी सुबुकी ।
रह गये थाम कर कलेजा हम ॥

तब गई कब नहीं उधर ही फिर ।
जब किसी ने उसे जिधर फेरा ॥
जाति का देख बेकलेजापन ।
है कलेजा निकल पड़ा मेरा ॥

जाति के पांचवें सवारों में ।
और उन में जिन्हें कहें बरतर ॥
देख कर चोट बेतरह चलती ।
चोट है लग रही कलेजे पर ॥

हम दुखी हैं कहें कहाँ तक दुख।
कब न सूई चुभी नयन तिल में॥
कब रहे दुख न फूलते फलते।
कब फफोले पड़े नहीं दिल में॥

आज दिन भी बेतरह हैं पिस रहे।
छूटते उन के बतोले हैं नहीं॥
हैं फफोले पर फफोले पड़ रहे।
टूटते दिल के फफोले हैं नहीं॥

देख करके चहल पहल अब तो।
दिल अनायास है दहल जाता॥
क्यों न सब दुख-सवाल हल होते।
दिल हमारा अगर बहल जाता॥

वह रहा फूल हो गया काँटा।
स्वर्ग से भूत का बना डेरा॥
लाट था अब गया बहुत ही लट।
बल पड़े दिल उलट गया मेरा॥

है बुरी चाट लग गई जी को।
बेतरह है कचट कचट जाता॥
हो गया है उचाट कुछ ऐसा।
आज दिल है उचट उचट जाता॥

क्या कभी अब नहीं खिलेगा वह।
फूल सुख का न खिल सका मेरा॥
खा बुरी चोट दुख-चपेटों की।
हो गया चूर चूर दिल मेरा॥

है कलेजा निकल रहा मेरा।
हैं लहू घूंट इन दिनों पीते॥
काटते हैं बड़े दुखों से दिन।
पेट हम काट काट हैं जीते॥

भीख माँगे हमें नहीं मिलती।
रह गये हाथ में नहीं पैसे॥
आग है लग गई कमाई में।
पेट की आग बुझ सके कैसे॥

पेट पापी नहीं कराता क्या।
सोच लें बल निकालनेवाले॥
पालना पेट तो पड़ेहीगा।
क्या करें पेट पालनेवाले॥

आँख उठती नहीं उठाये भी।
मुँह बहुत ही सहम सिये हम हैं॥
रात दिन पेट थाम कर अपना।
दौड़ते पेट के लिये हम हैं॥

कब दुखी-दुख सुखी समझता है।
मतलबी लोग हैं न यम से कम॥
रह गये हैं न देखनेवाले।
पेट अपना किसे दिखायें हम॥

देखता कोई दुखी का दुख नहीं।
मूंद आँखों को दिया आराम ने॥
आज दिन है माँगना खलता बहुत।
हम खलायें पेट किस के सामने॥

तरबतर हो आँसुओं से बेतरह ।
कब हमारी बेकसी रोई नहीं ॥
पीठ कैसे लग नहीं जाती भला ।
है हमारी पीठ पर कोई नहीं ॥

जातिहित के बड़े कठिन पथ में ।
कब ठहर वह सका ठिकाने से ॥
टल गया टालटूल कर कितने ।
टिक सका पाँव कब टिकाने से ॥

सब सुखों के हमें पड़े लाले ।
है कुदिन ने न कौन डाले बल ॥
है न कल मिल रही कसाले सह ।
घिस गये पाँव कोस काले चल ॥

हित न हो पाया गया चित हो दुचित ।
आँख से आँसू छूना नित छना ॥
कोस काले चल कलेजा हिल गया ।
पाँव काँटों से छिले छलनी बना ॥

काहिली भागी भगाने से नहीं।
है नहीं जीवट जगाने से जगी॥
तूल हो दुख तिल गया है ताल बन।
है हमें तब भी न तलवों से लगी॥

जी की कचट

जो बड़े बेपीर को पिघला सके।
जाय टल जिस से बिपद बादल घिरा॥
चाहिये जैसा गरम वैसा रहे।
हम सके ऐसा कहां आँसू गिरा॥

छोड़ दें आप अठकपालीपन।
मत करें होंठ काट काट सितम॥
हो चुके काठ गांठ का खोकर।
रो चुके आठ आठ आँसू हम॥

भर गये छलके अड़े उमड़े बहुत।
मोतियों के रंग में ढलते बढ़े॥
कर सके क्या, गिर गले, जल भुन गये।
एक क्या सौ बार तो आँसू कढ़े॥

आँखवाले आँख भर कर हैं खड़े।
अब बड़ी बेहूदगी से ऊब जा॥
क्यों डुबाती जाति को है डाह तू।
डबडबाये आँसुओं में डूब जा॥

आदमीयत की अगर होती चली।
तो न अनबन आग जग देता जगा॥
रंग लाती प्यार की रंगत अगर।
हाथ जाता तो न लोहू से रँगा॥

हो रहा है बेतरह बेचैन जी।
सुध हमारी बेसुधी है लूटती॥
देख कर कटता कलेजा जाति का।
फूटती है आँख, छाती टूटती॥

झेलते झेलते मुसीबत को ।
हो गया नाक में हमारा दम ॥
हो गये काठ, बन गये पत्थर ।
थामते थामते कलेजा हम ॥

दे जिन्हें मान मान मिलता है ।
मान हैं कर रहे उन्हीं का कम ॥
देख यह हाल नौनिहालों का ।
थाम कर रह गये कलेजा हम ॥

अब उसे किस तरह जगायें हम ।
जाग कर वह अगर नहीं जगता ॥
क्या करें लोग बाग के हित में ।
लाग से दिल अगर नहीं लगता ॥

सिर झुकाने से सका जितना कि झुक ।
झंझटें सह सैकड़ों झुकता गया ॥
जो कभी उकता, सका उकता नहीं ।
अब वही दिल है बहुत उकता गया ॥

तब भला कैसे पटाये पट सके।
जब कि उस से आज तक पाई न पट॥
वह चलाते चोट थकता ही नहीं।
चोट खा खा बढ़ गई जी की कचट॥

देस का दुख बखानती बेला।
किस तरह रुँध गला नहीं जाता॥
जाति की देख कर भरी आँखें।
जी रहा कौन सा न भर आता॥

देस पर जो निसार होते थे।
हार अब वे रहे नहीं वैसे॥
पड़ गये कान में भनक ऐसी।
जायगा जी सनक नहीं कैसे॥

क्या कुदिन अब सुदिन नहीं होगा।
दिन ब दिन गात है लटा जाता॥
नस गई सूख, धँस गईं आँखें।
पेट है पीठ से सटा जाता॥

काम जो आज कर रहे हैं हम।
कब गया वह कठिन नहीं माना॥
साँसतें नित नई नई सह सह।
है सहल पाँव का न सहलाना॥

समय का फेर

धन विभव की बात क्या जिन के बड़े।
रज बराबर थे समझते राज को।
है तरस आता उन्हीं के लाड़िले।
हैं तरसते एक मूठी नाज को॥

क्या दिनों का फेर हम इस को कहें।
या कि है दिखला रही रंगत बिपत॥
थी कभी हम से नहीं जिन की चली।
आज दिन वे ही चलाते हैं चपत॥

बेर, खा वे बिता रहे हैं दिन।
जो रहे धन-कुबेर कहलाते॥
अन्न से घर भरा रहा जिन का।
आज वे पेट भर नहीं पाते॥

चाव से चुगते जहां मोती रहे।
हंस तज कर मानसर आये हुए॥
पोच दुख से आज वाँ के जन पचक।
फिर रहे हैं पेट पचकाये हुए॥

जो सुखों की गोदियों के लाल थे।
दिन ब दिन वे हैं दुखों से घिर रहे॥
जो रहे अकड़े जगत के सामने।
आज वे हैं पेट पकड़े फिर रहे॥

बाँटते जो जहान को उन को।
सुध रही बाट बाँटने ही की॥
पाटते जो समुद्र थे उन को।
है पड़ी पेट पाटने ही की॥

पेट जिन से चींटियों तक का पला।
जा सके जिन के नहीं जाचक गिने॥
कट रहे हैं पेट के काटे गये।
लट रहे हैं कौर वे मुँह का छिने॥

दूध पीने को उन्हें मिलता नहीं।
जो सहित परिवार पीते घी रहे॥
अब किसी का पेट भर पाता नहीं।
लोग आधा पेट खा हैं जी रहे॥

पेट भर अब अन्न मिलता है कहां।
हैं कहाँ अब डालियां फल से लदी॥
बह रहा है सोत दुख का अब वहां।
थी जहां घी दूध की बहती नदी॥

छिन गया आज कौर मुँह का है।
गाय देती न दूध है दूहे॥
है बुरा हाल भूख से मेरा।
पेट में कूद हैं रहे चूहे॥

बात बिगड़े नहीं किसी की यों।
मरतबा यों न हो किसी का कम॥
पाँव मेरे जहान पड़ता था।
दुख पड़े पाँव पड़ रहे हैं हम॥

आज वे हैं जान के गाहक बने।
मुँह हमारा देख जो जीते रहे॥
हाथ धो वे आज पीछे हैं पड़े।
जो हमारा पाँव धो पीते रहे॥

छू जिन्हें मैल दूर होता था।
आज वे हो गये बहुत मैले।
वे नहीं आज फैलते घर में।
पाँव जो थे जहान में फैले॥

बेतरह क्यों न दिल रहे मलता।
दुख दुखी चित्त किस तरह हो कम॥
लोटते पाँव के तले जो थे।
पाँव उनका पलोटते हैं हम॥

गालियां हैं आज उन को मिल रहीं।
गीत जिन का देवते थे गा रहे॥
पाँव जिन के प्रेम से पुजते रहे।
पाँव की वे ठोकरें हैं खा रहे॥

अब वहां छल की, कपट की, फूट की।
नटखटी की है रही फहरा धुजा॥
पापियों का पाप मन का मैल धो।
है जहां पर पाँव का धोअन पुजा॥

आज वे पाले दुखों के हैं पड़े।
जो सदा सुख-पालने में ही पले॥
सेज पर जो फूल की थे लेटते।
वे रहे हैं लेट तलवों के तले॥

जगाने की कल

फटकार

बात चिकनी कपट भरी कह कर।
जब कि वह जाति पर बला लावे॥
जब रही खींचतान में पड़ती।
जीभ तब खैंच क्यों न ली जावे॥

पेट की चापलूसियों में पड़।
गालियां जो कि जाति को देवें॥
चाहिये तो बिना रुके हिचके।
जीभ उन की निकाल ही लेवें॥

जो कि बेढंग चल करे चौपट।
चाहिये ऐंच कर उसे दम लें॥
जाति की नाक कट गई जिस से।
काट उस जीभ को न क्यों हम लें॥

वार पर वार कर रही जब थी।
तब भला किस तरह तरह देते ॥
पड़ गई जाति गाढ़ में जिस से।
काढ़ उस जीभ को न क्यों लेते ॥

जाति के काम जब नहीं आते।
डींग हम मारते रहे तब क्या ॥
जब कि फटकार ही रही पड़ती।
मूंछ फटकारते रहे तब क्या ॥

जाति के देख देख कर दुखड़े।
जो न बेताब बन उन्हें पूछें ॥
रोंगटे जो खड़े न हो जावें।
तो रहीं क्या खड़ी खड़ी मूछें ॥

जाग तब कैसे सकेंगे, ज्ञान की।
जोत जी में जब कि जगती ही नहीं ॥
तब भला कैसे हमें जी से लगे।
बात लगती जब कि लगती ही नहीं ॥

है बहक इतना कि कितनी बात को।
ताड़ कर के भी नहीं हम ताड़ते॥
है हमारी बात की यह बानगी।
हैं बना कर बात बात बिगाड़ते॥

क्यों न बल को तौल लें, होगा बुरा।
बात जी में बेठिकाने की ठने॥
क्या किसी की हम गढ़ेंगे हड्डियां।
बात गढ़ लेवें अगर गढ़ते बने॥

जीभ सड़ जाती न जानें क्यों नहीं।
बेअटक कहते हुए बातें सड़ी॥
बात सीधी किस तरह से तब कहें।
बाँट में जब बात टेढ़ी ही पड़ी॥

दूर की लेंगे बकेंगे बहक कर।
काम के हित जी हुआ बै ही नहीं॥
किस तरह लेंगे खिलौना चाँद का।
बात है, करतूत कुछ है ही नहीं॥

जाति को देख कर पड़ा दुख में।
अब चलेंगे न हम मदद देने॥
पड़ गये काम काइयांपन कर।
लग गये हैं जँभाइयां लेने॥

है उन्हें छुट्टी कहाँ जो कुछ करें।
क्या हुआ जो आबरू है जा रही॥
लों अगर अँगड़ाइयां हैं ले रहे।
लों जँभा जो है जँभाई आ रही॥

जाति औ प्रीति की अजब जोड़ी।
है बँधी धाक जो बिछुड़ खोती॥
आज तक भी जुड़ी न जोड़े से।
है इसी से थुड़ी थुड़ी होती॥

जल गया वह मुँह न क्यों जिस से कि हम।
जातिहित को भाड़ में हैं झूंकते॥
मुँह छिपा लेवें, मगर मुँह पर भला।
थूकनेवाले न कैसे थूकते॥

आज दिन तो हैं कलेजे चिर रहे।
क्या हुआ दो चार उँगली जो चिरी॥
क्यों फिराये आँख फिरती ही नहीं।
क्या छुरी अब भी न गरदन पर फिरी॥

राह उलटी किस लिये पकड़ी गई।
क्यों घुमाने से नहीं हैं घूमते॥
जो अँगूठा हैं हमें दिखला रहे।
क्यों अँगूठा हैं उन्हीं का चूमते॥

हो सकेगा काम तो कोई नहीं।
बात हित की सुन चिटक जाया करें॥
चोट जी को तो लगेगी ही नहीं।
उँगलियों को बैठ चटकाया करें॥

हो सकेगी बात कैसे दूसरी।
मुँह भलाई से सदा मोड़ा करें॥
फोड़ पायें तो रहें घर फोड़ते।
बैठ कर या उँगलियां फोड़ा करें॥

सूरमापन अगर न धाक रखे।
चाहिये तो चलें न धमकाने॥
जो न तलवार को सकें चमका।
तो लगें उँगलियां न चमकाने॥

बात हित की जमी नहीं जी में।
पग न पाया बिचारपथ में थम॥
किस लिये आज हो गये जड़ हैं।
क्या तमाचे जड़े गये हैं कम॥

जाति-हित-रुचि जब कि जी में आ जमी।
बन गई तब काहिली कैसे सगी॥
लाग से लगते नहीं क्यों काम में।
हाथ में तो है नहीं मेंहदी लगी॥

किस तरह तो हम निरे पत्थर नहीं।
चोट जी को जब कि लग पाती नहीं॥
देख टुकड़ा जाति का छिनते अगर।
सैकड़ों टुकड़े हुई छाती नहीं॥

देस का मुँह गया बहुत कुम्हला।
किस तरह मुँह रहा खिला तेरा॥
छिल रहा जाति का कलेजा है।
पर कलेजा कहाँ छिला तेरा॥

हौसले की गोद में हित हैं पले।
है जहाँ साहस उमंगें हैं वहीं॥
बेदिली कैसे न दिल में घर करे।
पास दिल है पर दिलेरी है नहीं॥

देसहित देख जो नहीं पाते।
जातिहित है अगर नहीं भाता॥
आँख तो फूट क्यों नहीं जाती।
किस लिये बैठ जी नहीं जाता॥

जान में जान तो न आयेगी।
आन भी जायगी चली धीमे॥
बात बेजान जाति के हित की।
जो जमाये जमी नहीं जी में॥

जातिहित का जाप क्या जपते रहे।
देख जो भय का भयानक मुख भगे॥
देस दुख दलने चले क्या दौड़ कर।
पेट में जो दौड़ने चूहे लगे॥

तब सकेंगे पाल कैसे देस को।
जब कि है परिवार भी पलता नहीं॥
तब चलाये राज कैसे चल सके।
जब चलाये पेट भी चलता नहीं॥

है जिसे पेट देश से प्यारा।
जो जने जाति का अहितकारी॥
मर गया वह न क्यों जनमते ही।
क्यों गई कोख वह नहीं मारी॥

दौड़ कर के जातिहित-मैदान में।
पाँव कैसे वह भला सकता गड़ा॥
चल दबे पाँवों परग दो चार ही।
पाँव दबवाना जिसे अपना पड़ा॥

किस लिये आग हैं खड़े होते।
क्यों सुपथ में न पाँव अड़ पाया॥
गड़ गये आप क्यों न लाज लगे।
पाँव गाड़े अगर न गड़ पाया॥

देस मिल जाय धूल में तो क्या।
भूल है जो उन्हें कहें अहदी॥
वे उठें फूल सेज तज कैसे।
पाँव की जायगी बिगड़ मेंहदी॥

जी भलाई के लिये है फूलता।
तो समय पर क्यों विफल है हो रहा॥
भय हुए फूले समाते आप हैं।
पाँव कैसे फूल जाता तो रहा॥

काल के गाल में न कौन गया।
अब कहाँ वेणु, कंस, रावन हैं॥
छोड़ कर जाति-पाँव पावन क्यों।
पूजते पाँव हम अपावन हैं॥

किस लिये है आँख पर परदा पड़ा।
दिन ब दिन हैं उठ रहा परदा ढका॥
लात पर है लात लगती जा रही।
छूट तलवे का न सहलाना सका॥

देशहित और जातिहित पथ में।
चाव से जो नहीं सके चल वे॥
तो तुरत जाँय धूल ही में मिल।
जाँय गल पाँव, जाँय जल तलवे।

लान तान

जब कि कस ली पत गँवाने पर कमर॥
पत उतरने का रहा तब कौन डर।
बेपरद क्यों हों न परदेवालियां।
पड़ गया परदा हमारी आँख पर॥

नित कचूमर है धरम का कढ़ रहा।
है भली करनी कलपती दुखभरी॥
जो गई हैं बाहरी आँखें बिगड़।
तो गईं क्यों फूट आँखें भीतरी॥

क्यों सुनोगे मरे या जाति जिये।
बस तुम्हें खाना पीना सोना है॥
सच है अंधे के सामने रोना।
अपने आप अपनी आँख खोना है॥

देस का दुख न देखनेवाले।
देख पाये कहीं न तुम जैसे॥
आँख ऊँची न रख सके जब तो।
आँख ऊँची भला रहे कैसे॥

कुछ न सूझा, है न अब भी सूझता।
दाम देते हैं हमीं तो राख का॥
खोल देखो आँख हम सा है कहां।
गाँठ का पूरा व अंधा आँख का॥

पाँव होते पड़े रहे पीछे।
हाथ होते न कर सके धंधे॥
सूझती हैं भलाइयां न हमें।
आँख होते बने रहे अंधे॥

बँध सकेंगे न एक डोरे में।
तोड़ कर के रहा सहा बंधन॥
घर बसा कब उजाड़ कर के घर।
जा सका आज भी न अंधापन॥

डालते आज भी नहीं बनता।
बोझ से बेतरह छिले कंधे॥
है हमें देख भाल का दावा।
सच तो यों है कि हैं बड़े अंधे॥

वह ललाई रही नहीं मुँह की।
है सियाही निखर रही छन छन॥
रंग पहचान तब सकें कैसे।
रंग लाता है जब कि अंधापन॥

दिन ब दिन हैं बिगड़ रहे लेकिन ।
हैं वही काम औ वही धंधे ॥
क्यों हरा ही हरा न सूझेगा ।
जब कि सावन के आप हैं अंधे ॥

सुन जिसे धांधली दहल उठती ।
और जाते दबक दिखावे सब ॥
जब बजाये बजे न वे बाजे ।
हम रहे गाल क्या बजाते तब ॥

पूछता बात तक नहीं कोई ।
पर नहीं तार डींग का टूटा ॥
ठोकरें हैं गली गली खाते ।
गाल का मारना नहीं छूटा ॥

लोग अपने हकों पदों को भी ।
बीरता के बिना नहीं पाते ॥
जब गई बीरता बिदा हो तब ।
क्या रहे बार बार मुँह बाते ॥

पाँव पर अपने खड़े होते नहीं।
धन लुटा कर दिन ब दिन हैं चूकते॥
चाटते हैं जब पराया थूक हम।
लोग तब कैसे न मुँह पर थूकते॥

बेटियां बेंच बेंच पेट पला।
हैं लुटीं हाथ से न राड़ कम॥
हैं छिपाते छिपी हुई चालें।
पर कभी मुँह नहीं छिपाते हम॥

क्यों बचाये न आँख वह, जिसने।
जाति को बेंच पा लिये पैसे॥
लग गया जब कलौंस ही मुँह में।
तब भला मुँह दिखा सके कैसे॥

कर दिखाते भलाइयां तब क्या।
जब भला ठान भी नहीं ठनता॥
तब भला भाग खोल देते क्या।
जब कि मुँह खोलते नहीं बनता॥

है न पाता पनाह अपनापन।
मेल को धूल में मिला डाला॥
जाति को डाल काल के मुँह में।
बेतरह मुँह किया गया काला॥

क्या हँसी खेल है सँभल जाना।
तुम कहीं बैठ कर हँसो खेलो॥
है तुमारा न मुँह कि संभलोगे।
मुँह तनिक देख आइने में लो॥

नौजवानों की उमंगों को कुचल।
तुम गये हो आँख में बेढब समा॥
जो चले हो जाति का मुँह मूँदने।
दाँत तालू में तुमारे तो जमा॥

हम रहेंगे बेसुधे कब तक बने।
ओस से भी प्यास जाती है कहीं॥
क्यों न तलवों से हमें अब भी लगी।
दिन रहे तालू उठाने के नहीं॥

खुल गया भेद सब बिना खोले।
आँख बतलाइये खुलेगी कब॥
भर लबालब गया सितम-प्याला।
खुल हमारा सका न अब भी लब॥

जब कि था चाहिये नहीं दबना।
तब भला किस लिये गये दब हम॥
जब कि था चाहिये उसे खुलना।
तब हुआ बन्द क्यों हमारा लब॥

क्या न दो बात कह सकेंगे हम।
क्यों हमें है बिपत्ति ने घेरा॥
कौन बेजान है भला हम सा।
जी हिला पर न लब हिला मेरा॥

तो कहां धुन हमें लगी सच्ची।
जातिहित जो सही न आँच कड़ी॥
मुँह हमारा अगर नहीं सूखा।
होंठ पर जो पड़ी नहीं पपड़ी॥

बेरियों को न चाट जब पाया।
तब रहे होंठ चाटते हम क्या॥
जब सके काट ही न दुख अपना।
तब रहे होंठ काटते हम क्या॥

जाति को राह पर लगाने की।
काम की बात सैकड़ों सिखला॥
तब भला क्या निकालते सूरत।
जब कि सूरत सके नहीं दिखला॥

जाति जिस से उठे हिले डोले।
पत्थरों की न जाय बन मूरत॥
तो न सूरत दिखाइये हम को।
जो न इस की बताइये सूरत॥

दूर बेचारपन करें सारा।
मत बिचारा करें महूरत ही॥
क्या नतीजा सवाल का होगा।
साहबो है सवाल सूरत ही॥

तो मरें डूब नाम सुन रन का।
है हमें आ गई अगर जूड़ी॥
जम लड़ें, दें पछाड़ जम को भी।
लें पहन हाथ में न हम चूड़ी॥

हो गई क्यों न तो कई टुकड़े।
किस लिये टूट वह नहीं जाती॥
जाति के देख देख कर दुखड़े।
है न छाती अगर धड़क पाती॥

छिन गया सरबस कलेजा छिल गया।
चौगुनी क्यों चोट लग पाती नहीं॥
छटपटाते देख दुख से जाति को।
क्यों छ टुकड़े हो गई छाती नहीं॥

काठ हैं, जो जातिहित करते समय।
सेज आलस की हुई सूनी नहीं॥
जो न चौगूनी उमंगें हो गईं।
हो गई छाती अगर दूनी नहीं॥

बात तो जाति प्यार की सुन ली।
पर रहा वह न दुख अँगेजे पर॥
जाति पत कब रखी गई पत खो।
हाथ रख कर कहें कलेजे पर॥

चुन सकें तो चाहिये चुन लें उन्हें।
आज तक काँटे न कम हैं बो गये।
आज भी क्यों है धड़क खुलती नहीं।
दिल धड़कते तो बहुत दिन हो गये॥

बढ़ावा

काम में देर तब न कैसे हो।
दिल गया भूल भागवाले का॥
अब लगेगी न देर होने में।
जब लगा हाथ लागवाले का॥

वार तलवार कर पड़ें पिल हम।
कूर को सूर साधना सिखला॥
मोड़ कर मुँह मिजाजवालों का।
दें मँजे हाथ के मजे दिखला॥

किस लिये कमहिम्मती से काम लें।
बैरियों को क्यों नहीं दे मारते॥
कल्ह मरते आज क्यों जायें न मर।
हाथ छाती पर अगर हैं मारते॥

चार बाहें तो किसी के हैं नहीं।
क्यों सतायें दूसरे औ हम सहें॥
क्यों रहें वे टूट पड़ते लूटते।
किस लिये हम कूटते छाती रहें॥

जो बुरी बातें बहुत ही खल चुकीं।
इस समय भी वैसिही वे क्यों खलें॥
भाग को तो ठोंकते ही हम रहे।
आज छाती ठोंक कर भी देख लें॥

वह करे सामने न मुँह अपना।
जो करे सामना न नेजे का॥
क्यों बिना जान का बने कोई।
जाय बन क्यों बिना कलेजे का॥

क्यों भला आसमान पर न चढ़ें।
जब पतंगें चढ़ीं चढ़ाने से।
बढ़ करें क्यों न काम हम बढ़ बढ़।
जाय बढ़ दिल अगर बढ़ाने से॥

बिपत्ति के बादल

कोर कसर

कोयलों पर हम लगाते हैं मुहर।
पर मुहर लुट जा रही है हर घड़ी॥
मिट गये पर पेंठ है अब भी बनी।
है अजब औंधी हमारी खोपड़ी॥

है कहीं रोक थाम का पचड़ा।
है कहीं काट छांट का ऊधम॥
अब इसे देख हम सकें कैसे।
हो गया देख देख नाकों दम॥

बात हो काम की बला से हो।
हैं बड़े बेसुधे कहाँ ऐसे॥
कान ही जब कि ले गया कौआ।
तब उसे कान कर सकें कैसे॥

देखता हूं कि जाति का जौहर।
है बहा ले चला समय सोता॥
लोग होंगे खड़े कमर कस क्या।
कान भी तो खड़ा नहीं होता॥

बार सौ सौ सुना सुना ऊबे।
जाति दुखड़ा सुना नहीं जाता॥
थक गये काढ़ काढ़ने वाले।
कान का मैल कढ़ नहीं पाता॥

तब भला सूझता हमें कैसे ।
आँख में जब कि चुभ गई सूई ॥
तब सुनेंगे कही किसी की क्यों ।
कान में जब भरी रही रूई ॥

तब अगर वह उठा उठा तो क्या ।
यह भला था उमेठना सहता ॥
जाति की लान तान सुनने को ।
कान जब है उठा नहीं रहता ॥

बात सुन बदहवास लोगों की ।
क्यों भला बदहवास हम होवें ॥
दौड़ पीछे पड़ें न कौवे के ।
कान अपना न किस लिये टोवें ॥

जाति के लाल जो न लाल बने ।
औ लिये पाल लाल औ सुनिये ॥
तो खुलेगा न भाग खोले भी ।
बात यह कान खोल कर सुनिये ॥

दौड़ थी दूर को बहुत लम्बी।
हम निराली छलांग भर न सके॥
नाम के तो रहे बहुत भूखे।
काम की बात कान कर न सके॥

वह बचन बात से कहीं तीखा।
बेधता है बिना बिधे ही जो॥
छिद उठे जो उसे नहीं सुन कर।
कान में छेद ही नहीं है तो॥

जब कि जीवट गई रसातल को।
आप ही सोचिये रहा तब क्या॥
जब खुले आम कह नहीं सकते।
कुछ दबी जीभ से कहा तब क्या॥

क्यों रहेगी जाति जीती जागती।
जब घड़ी है मेल की ही टल रही॥
ठीक नाड़ी है न चलती बूझ की।
सूझ की ही साँस जब है चल रही॥

जान ही जब नहीं किसी में है।
तब भला मान क्यों रहे मन में॥
किस तरह साँस ले भला कोई।
साँस ही जब रही नहीं तन में॥

जाति के हित के लिए कस कर कमर।
भूल कोई किस लिए जाता रहा॥
मुँह दिखायेगा भला तब किस तरह।
साँस तक भी जो नहीं नाता रहा॥

बैर जैसे बड़े लड़ाके को।
प्रीति कैसे पछाड़ तब पाती॥
पाँव अनबन उखाड़ देने में।
साँस जब थी उखड़ उखड़ जाती॥

जाय जूआ बुरा उतर जिस से।
जो न करते रहे वही धंधे॥
तो हमें बैल ही बनाते हैं।
बैल कैसे उठे उठे कंधे॥

वह सुधरता तो सुधरता किस तरह।
देश की सुध ही नहीं जब ली गई॥
जातिहित की बात तब कैसे सुनें।
कान में जब डाल उँगली दी गई॥

जो हथेली पर लिये ही सिर फिरे।
टालने को जाति के सिर की बला॥
देख उन पर दाँत हम को पीसते।
कौन दाँतों में न उँगली दे चला॥

तब नहीं कैसे हमारी गत बने।
जब कि गत हम आप बनवाते रहे॥
पत रहे तो किस तरह से पत रहे।
जब चपत हर बात में खाते रहे॥

साँसतें तब क्यों नहीं सहनी पड़ें।
जब उन्हें चुपचाप हम ने हैं सहे॥
हाथ कैसे तब न बाँधे जायँगे।
जब खड़े हम हाथ बाँधे ही रहे॥

तब न मनमानियां सहेंगे क्यों।
हाथ में जब कि मन मरे के हैं॥
तब न बेकार जाँयगे बन क्यों।
जब बिके हाथ दूसरे के हैं॥

हो सके दुख-सवाल हल कैसे।
है अगर छूटता न छल मेरा॥
देख कर जाति को दहल जाते।
कब कलेजा गया दहल मेरा॥

रंग उड़ जाय क्यों न सुख-मुख का।
क्यों फरेरा उड़े न दुख तेरा॥
बेतरह जाति जो उड़ा देखे।
जो कलेजा उड़ा नहीं मेरा॥

तब दुखी-जाति-दुख टले कैसे।
जब न दुख देख झोंक से झपटे॥
जान बेजान में पड़े कैसे।
जब दिलोजान से नहीं लपटे॥

तोड़ लाते उचक तरैया को।
औ घड़े में समुद्र को भरते॥
कौन सा काम कर नहीं पाते।
हम दिलोजान से अगर करते॥

देश को देख कर फला फूला।
कब खिला फूल की तरह मुखड़ा॥
जाति को कब हरा भरा पाकर।
दिल हमारा उमड़ उमड़ उमड़ा॥

जान पर खेल जो नहीं जाते।
किस तरह नोंक झोंक तो निपटे॥
छूटती जाति-जान तो कैसे।
लोग जी जान से न जो लिपटे॥

किस तरह कामयाब तो बनते।
किस तरह हों निहाल, भाग जगे॥
लोग के साथ काम करने में।
लोग जी जान से अगर न लगे॥

साधते साधते गये थक हम।
जातिहित साधना मगर न सधी॥
बाँधते बाँधते जनम बीता।
देसहित के लिये कमर न बँधी॥

क्यों खटकते हमें बुरे काँटे।
क्यों लगे चाट गाँठ का खोते॥
सब बुरी हाट ठाट बाटों से।
पाँव मेरे अगर हटे होते॥

देख ऊंचे समाज को चढ़ते।
हैं हमीं आँख मीचने वाले॥
पड़ बुरी खींचतान पचड़ों में।
हैं हमीं पाँव खींचने वाले॥

तो पड़े क्यों पहाड़ सिर पर गिर।
नँह अगर दुख रहे सुखी के हों॥
किस लिये तो हमें न, दुख भी हो।
पाँव दुखते अगर दुखी के हों॥

हैं मथे तन बिन बहुत, सब छिन गया।
लोग काँटे हैं घरों में बो रहे॥
है मुसीबत का नगारा बज रहा।
पाँव पर रख पाँव हम हैं सो रहे॥

भर गया पोर पोर में औगुन।
नाम हम में न रह गया गुन का॥
जो गला चांप चांप देते हैं।
पाँव हम चांप हैं रहे उन का॥

कर सके देस जाति का न भला।
चल भले भाव के भले रथ में॥
तज धरम के धुरे अधर्मी बन।
पाँव हैं धर रहे बुरे पथ में॥

फूट

लुट गये पिट उठे गये पटके।
आँख के भी बिलट गये कोये॥
पड़ बुरी फूट के बखेड़े में।
कब नहीं फूट फूट कर रोये॥

बढ़ सके मेल जोल तब कैसे।
बच सके जब न छूट पंजे से॥
क्यों पड़ें टूट में न, जब नस्लें।
छूट पाईं न फूट-पंजे से॥

खुल न पाईं जाति-आँखें आज भी।
दिन ब दिन बल बेतरह है घट रहा॥
लूट देखे माल की हैं लट रहे।
फूट देखे है कलेजा फट रहा॥

जो हमें सूझता, समझ होती।
बैर बकवाद में न दिन कटता॥
आँख होती अगर न फूट गई।
देख कर फूट क्यों न दिल फटता॥

फूट जब फूट फूट पड़ती है।
प्रीति की गांठ जोड़ते क्या हैं॥
जब मरोड़ी न ऐंठ की गरदन।
मूंछ तब हम मरोड़ते क्या हैं॥

भारी भूल

सूझ औ बूझ के सबब, जिस के।
हाथ में जाति के रहे लेखे॥
है बड़ी भूल और बेसमझी।
जो कड़ी आँख से उसे देखे॥

वे हमारे ढंग, वे अच्छे चलन।
आज भी जिन की बदौलत हैं बसे॥
दैव टेढ़े क्यों न होंगे जो उन्हें।
देखते हैं लोग टेढ़ी आँख से॥

हिन्दुओं पर टूट पड़ने के लिये।
मौत का वह कान नित है भर रहा॥
खोद देने के लिये जड़ जाति की।
जो कि है सिरतोड़ कोशिश कर रहा॥

जी सके जिस रहन सहन के बल।
चाहिये वह न चित्त से उतरे॥
कर कतरब्योंत बेतरह उस में।
क्यों भला जाति का गला कतरे॥

एका की कमी

धुन हमारी अलग रही बँधती ।
एक ही राग कब हमें भाया ॥
जाति रँग में ढले पदों को भी ।
कब गले से गला मिला गाया ॥

दम सुनाने में नहीं जिस के रहा ।
है नहीं उस की सुनी जाती कहीं ॥
खोलते तो कान कैसे खोलते ।
एक सुर से बोलते ही जब नहीं ॥

है समाई न एक धुन अब तक ।
दिल हिले तो भला हिले कैसे ॥
कुछ न कुछ है कसर मिलाने में ।
सुर मिले तो भला मिले कैसे ॥

तो समय पर चूकते हम किस तरह।
जो समय की रंगतें पहचानते॥
कौन सुर से सुर मिलाता तब नहीं।
सुर अगर सुर से मिलाना जानते॥

बात कहते अगर नहीं बनती।
तो भला था यही कि चुप रहते॥
सुर सदा है अलग अलग रहता।
एक सुर से कभी नहीं कहते॥

बेताबी

अब तनिक भी न ताब है तन में।
किस तरह दुख समुद्र में पैठें॥
बेतरह काँपता कलेजा है।
क्यों कलेजा न थाम कर बैठें॥

बेतरह वह लगा धुंआ देने।
चाहता है जहान जल जाया॥
मुद्दतें हो गईं सुलगते ही।
अब कलेजा न जाय सुलगाया॥

हैं टपक बेताब करती बेतरह।
हैं न हाथों से बलाके छूटते॥
टूटते पाके पके जी के नहीं।
हैं नहीं दिल के फफोले फूटते॥

जाति जिस से भूल चूकों में फँसी।
था भला वह भाव खलता ही नहीं॥
क्या करें किस भांति बहलायें उसे।
दिल हमारा तो बहलता ही नहीं॥

अब हमारा वहीं ठिकाना है।
है जहाँ ठीक ठीक दुख देरा॥
तब कहें बात क्यों ठिकाने की।
है ठिकाने न जब कि दिल मेरा॥

जो रहा है बीत दिल है जानता।
है न इतनी ताब जो आहें भरें॥
जब समय ने है पकड़ पकड़ी बुरी।
तब न दिल पकड़े फिरें तो क्या करें॥

बेबसी

बेबसी, हो सदा बुरा तेरा।
यह कहाँ ताब जो करें चूँ तक॥
हम भला कान क्या हिलायेंगे।
कान पर रेंगती नहीं जूँ तक॥

देसहित का काम करने के समय।
हम न योंही डालते कंधे रहे॥
झंझटों में डाल डावाँडोल कर।
पेट के धंधे किये अंधे रहे॥

लाभ गहरा किस तरह तो हो सके।
हाथ लग पाया अगर गहरा नहीं॥
हम भला कैसे ठहर पाते वहाँ।
पाँव ठहराये जहाँ ठहरा नहीं॥

छूट तो पीछा सका दुख से कहां।
तो मुसीबत है कहाँ पीछे हटी॥
हाथ की जो हथकड़ी टूटी नहीं।
जो न बेड़ी पाँव की काटे कटी॥

गड़ गये, सौ सौ मनों के बन गये।
अड़ गये, हैं राह पर आये कहाँ॥
पैठने को जातिहित के पैंठ में।
ए हमारे पाँव उठ पाये कहाँ॥

और दूभर हुआ हमें जीना।
मन, थके मार, मर नहीं पाता॥
हैं उतरते अकड़ अखाड़े में।
पैंतरा पाँव भर नहीं पाता॥

जातिहित पथ न देख तै होते।
रुचि बहुत बार बार घबराई॥
राह भारी हुए भर आया जो।
भर गये पाँव, आँख भर आई॥

तंग है कर रही जगह तंगी।
हैं बखेड़े तमाम तो 'तै' से॥
वे समेटे सिमिट नहीं पाते।
पाँव लेवें समेट हम कैसे॥

फैलते देख पाँव औरों के।
वे भला क्यों नहीं अकड़ जाते॥
चाहता हूं सिकोड़ लेना मैं।
पाँव मेरे सिकुड़ नहीं पाते॥

बेबसी बाँट में पड़ी जब है।
जायगी नुच न किस लिये बोटी॥
चोट पर चोट तब न क्यों होगी।
जब दबी पाँव के तले चोटी॥

हर तरह कर बुराइयां अपनी।
वे कलें और के भले की हैं॥
जातियां बेतरह दबीं कुचलीं।
चींटियां पाँव के तले की हैं॥

थक गये बल कर, निकल पाये नहीं।
जा रहे हैं और वे नीचे धँसे॥
दिल दलक कर बेतरह दलके न क्यों।
हैं हमारे पाँव दलदल में फँसे॥

छूतछात

जो बहुत दुख पा चुके हैं आज तक।
कम न दुख होगा उन्हें अब दुख दिये॥
सब तरह से जो बेचारे हैं दबे।
मत उन्हें आँखें दबा कर देखिये॥

छूत क्या है, अछूत लोगों में।
क्यों न उन का अछूतपन लखिये॥
हाथ रखिये अनाथ के सिर पर।
कान पर हाथ आप मत रखिये॥

भूत सिर पर है बड़प्पन का चढ़ा।
छल रही है छूत जैसी बद बला॥
कर बुरी बेकार बेजा ऐंठ क्यों।
जाति का हम ऐंठ देते हैं गला॥

बाहरी जातपाँत के पचड़े।
भीतरी छूतछात की साधें॥
हैं हमें बाँध बेतरह देतीं।
क्यों उन्हें जाति के गले बाँधें॥

है कही जाती कहीं पर दानवी।
पुज रही है वह बनी देवी कहीं॥
आज छूआछूत-चिन्ता से छिदे।
कौन सी छाती हुई छलनी नहीं॥

तब सके छूट क्यों छिछोरापन।
सूझ जब छाँह छू नहीं पाती॥
क्यों मिटें छूतछात के झगड़े।
जब छिले दिल छिली नहीं छाती॥

आदमी हैं, आदमीयत है भली।
बात यह कोई कहे इतरा नहीं॥
छेद छाती में अछूतों के हुए।
जो अछूता जी गया छितरा नहीं॥

तब न छुटकारा दुखों से पा सके।
हम छोटाई छूत से छूटे न जब॥
एक सा सब छूटना होता नहीं।
छूटने से पेट छूटा पेट कब॥

वे अछूता हमें न छोड़ेंगे।
छूत से हैं जिन्हें नहीं छूते॥
हैं दबे पाँव के तले तो क्या।
क्या हमें काटते नहीं जूते॥

क्या उसी से कढ़ी न गंगा हैं।
बल उसी के न क्या पुजे बावन॥
हैं अपावन अछूत सब कैसे।
है भला कौन पाँव सा पावन॥

नाड़ी की टटोल

हमारे मनचले

सब तरह की सूझ चूल्हे में पड़े।
जाँय जल उन की कमाई के टके॥
जब भरम की दूह ली पोटी गई।
लाज चोटी की नहीं जब रख सके॥

लुट गई मरजाद पत पानी गया।
पीढ़ियों की पालिसी चौपट गई॥
चोट खा वह ठाट चकनाचूर हो।
चाट से जिस की कि चोटी कट गई॥

लग गई यूरोपियन रंगत भली।
क्यों बनें हिन्दी गधे भूंका करें॥
साहबीयत में रहेंगे मस्त हम।
थूकते हैं लोग तो थूका करें॥

सिरधरे या सिरफिरे

लुट गया कोई बला से लुट गया।
कुछ नहीं तो गांठ का उन की गिरा॥
है सुधारों की वहाँ पर आस क्या।
हो जहां पर सिरधरों का सिर फिरा॥

बढ़ गये मान भूख तंग बने।
आप का रह गया न वह चेहरा॥
देखिये अब उतर न जाय कहीं।
आप के सिर बँधा सुजस सेहरा॥

तब भला कैसे न हम मिट जायँगे ।
मनचले कैसे न तब हम को ठगें ॥
फिर गये सिर जब हमारे सिर धरे ।
बात बे-सिर-पैर की कहने लगें ॥

हैं हमारे पंथ जो प्यारे बड़े ।
हैं बुरे काँटे उन्हीं में बो रहे ॥
देख कर के सिरधरों का सिर फिरा ।
हैं कलेजा थाम कर हम रो रहे ॥

ढोंगिये

ढोंग रच रच ढकोसले फैला ।
जब उन्हों ने कि जाति घर घाले ॥
तब रखें पाँव फूंक फूंक न क्यों ।
और के कान फूंकने वाले ॥

तुम भली चाह को समझ लो तिल।
ताल होगा उसे बढ़ा लेना॥
ताल तिल को न जो बना पाया।
काम आया न तो तिलक देना॥

दुख सहे, पर दूसरों का हित करे।
वह रहा घिसता सदा ही इस लिये॥
यह भरम जी में समाया जो नहीं।
तो भला चन्दन लगाया किस लिये॥

इस तरह के हैं कई टीके बने।
जो कि तन के रोग देते हैं भगा॥
जो न मन के रोग का टीका बना।
तो हुआ फिर लाभ क्या टीका लगा॥

सोहते दिन रात माथे पर रहे।
देखता हूं बाल भी अब तो पके॥
जो न केसर को कियारी जी बना।
तो न केसर के तिलक कुछ कर सके॥

जो न हरि के प्यार का रँग चढ़ सका।
जो न चाही लालियों का सँग रहा॥
जो चिरोरी चाह की होती रही।
तो न रोरी के तिलक का रँग रहा॥

छाप भलमंसी लगा करके छला।
दिन दहाड़े की ठगी धोखा दिया॥
नटखटी का रंग जो उतरा नहीं।
तो किसी ने क्या लगा टीका लिया॥

जो न उस में झलक दिखायेंगी।
सब भली चाहतें ठिकाने से॥
आप के तो खिले हुए मुँह की
'श्री' रहेगी न 'श्री' लगाने से॥

जब कि चोटें हो धरम पर चल रहो।
औ बनावट ने उसे हो ढक लिया॥
तान ली तब आप ने लम्बी अगर।
तो तिलक लम्बा लगा कर क्या किया॥

तीन गुन के न जो निकट टूटे।
तुम रहे जो तिलोक से ऐंठे॥
तो तमाशा तुम्हें बनाने को।
हैं तिकोने तिलक तुले बैठे॥

धूर्त हैं, गोल गोल बातों में।
जो धरम का मरम छिपाते हैं॥
तुम करो गोलमाल मत ऐसा।
नित तिलक गोल यह बताते हैं॥

देख कर पाँव धर्म का उखड़ा।
भूल कर भूख प्यास बाँध कमर॥
तू खड़ा रात दिन अगर न रहा।
क्या किया तो खड़ा तिलक दे कर॥

जो न तिरछी आँख से तिरछे रहे।
कुछ न पाया तो तिलक तिरछे दिये॥
मर्म के आड़े न आये जो कभी।
तो तिलक आड़े लगाये किस लिये॥

छोड़ करके सजी सरग की सेज।
तू गया आग में नरक की लेट॥
धर्म की ओर फेर करके पीठ।
दे तिलक पालता रहा जो पेट॥

क्या किया दे कर बड़े उजले तिलक।
जो रहा मन मैल में सब दिन सना॥
जो न जी में छींट परहित की पड़ी।
तो हुआ क्या छींट माथे को बना॥

कुछ न छूआछूत से बच कर हुआ।
किस लिये खटराग फैलाये बड़े॥
छूतवाले बन कपट की छूत से।
जब तिलक पर लोभ के धब्बे पड़े॥

जो करें पार और की नावें।
हैं भँवर के वही पड़े पाले॥
फूंकते कान क्यों नहीं अपना।
और के कान फूंकनेवाले॥

हमारे साधू संत

और को पीर जो न जान सके।
वे जती हैं न हैं बड़े ढोंगी ॥
कान जिन के फटे न परदुख सुन।
वे कभी हैं न कनफटे जोगी ॥

कौन हैं रंग ढंग से लें सोच।
संत हैं या कि संतपन के काल ॥
राख तन पर मलें चढ़ाये भंग।
लाल आँखें किये बढ़ाये बाल ॥

तब रहे धूल फाँकते तो क्या।
देह में राख जब कि दी समवा ॥
किस लिये आप तब कमायें वे।
बाल को जब दिया गया कमवा ॥

भूल में ही हो पड़े भगवा पहन।
जो भुलावों से नहीं अब लौं भगे॥
जो सकी जी से न रंगीनी निकल।
रह सकेगा रँग न तो माथा रँगे॥

और दुनिया चिमट गई इन को।
संत का मन का रोकना देखो॥
इन लँगोटी भभूतवालों का।
आँख में धूल झोंकना देखो॥

धूल दे पाँव की टका ऐंठे।
धूतपन को भभूत दे पाले॥
धूल में संतपन मिला करके।
संत क्यों धूल आँख में डाले॥

तंगियों के बुरे गढ़े में गिर।
साधुओं का गरेरना देखो॥
जो कि भरते हैं तारने का दम।
उन का आँखें तरेरना देखो॥

घर रहे पर सुध नहीं घर की रही।
अब लगे ठगने रमा करके धुईं॥
बाहरी आँखें गई पहले रहीं।
भीतरी आँखें भी अब अंधी हुईं॥

किस लिये माला हिलाते तब रहे।
माल पर ही जब जमी आँखें रहीं॥
तब रहे चन्दन लगाते किस लिये।
जब कि मुँह में लग सका चन्दन नहीं॥

बन गये जब संत तब तज चाहतें।
संतपन चित को सिखाना चाहिये॥
जो दिखावों में फँसे अब भी रहे।
तो न तुम को मुँह दिखाना चाहिये॥

मान के अरमान जी में थे भरे।
संत बनने को मरे जाते रहे॥
चाह थी लाली रहे मुँह की बनी।
बेतरह मुँह की मगर खाते रहे॥

दूसरों के लिये बिके जो हैं।
वे करेंगे न झोल की बातें॥
मोल कैसे नहीं घटायेंगी।
संत की मोल जोल की बातें॥

जब चिलम जगती रही तब ज्ञान की।
जोत न्यारी क्यों न जगती कम रहे॥
नाक में दम क्यों रहे दम का न तब।
जब कि दम पर दम लगाते दम रहे॥

फँस गये जब कि चाह-फंदे में।
नेह नाते रहे छुड़ाते क्या॥
लग गई पूंछ पिछलगों की जब।
मूंछ को तब रहे मुड़ाते क्या॥

नाम के उन साधुओं के सामने।
आयु जिन की दाम के पीछे चुकी॥
किस तरह से आप झुक जायें भला।
जब झुकाये भी नहीं गर्दन झुकी॥

छोड़ घर-बार किस लिये बैठे।
दूर जी से न जो हुई ममता॥
तो रमाये भभूत क्या होगा।
जो रहा मन न राम में रमता॥

क्यों खुले भी न आँख खुल पाई।
किस लिये चेत कर नहीं चेते
लोग क्यों संत-पंथ-पंथी हो।
पाँव हैं पाप-पंथ में देते॥

कसौटी

देखना है अगर निकम्मापन।
तो हमें आँख खोल कर देखो॥
हैं हमीं टालटूल के पुतले।
जी हमारा टटोल कर देखो॥

टाट कैसे नहीं उलट जाता।
जब बुरी चाट के बने चेरे॥
दिन पड़े खाट पर बिताते हैं।
काहिली बाँट में पड़ी मेरे॥

कायरों का है वहाँ पर जमघटा।
था जहाँ पर बीर का जमता परा॥
सूर हम में अब उपजते ही नहीं।
सूरपन है सूर लोगों में भरा॥

जाति आँखों की बड़ी अकसीर को।
हैं गया बीता समझते राख से॥
देखते हम आँख भर कर क्या उसे।
देख सकते हैं न फूटी आँख से॥

क्यों बला में न बोलियां पड़ती।
जब बने जान बूझ कर तुतले॥
फूट पड़ती न वां बिपद कैसे।
हैं जहाँ बैर फूट के पुतले॥

तब बला में न किस तरह फँसते।
जब बला टाल हो नहीं पाते॥
हो सकेगा उबार तब कैसे।
जब रहे बार बार उकताते॥

बेहतरी किस तरह हिली रहती।
जब रहे काहिली दिखाते हम॥
भूल कैसे न तब भला होती।
जब रहे भूल भूल जाते हम॥

किस तरह काम हो सके कोई।
जब कि हैं काम कर नहीं पाते॥
गुत्थियाँ किस तरह सुलझ सकतीं।
जब रहे हम उलझ उलझ जाते॥

हैं अगर देखभाल कर सकते।
क्यों नहीं देखभाल की जाती॥
तब भला किस तरह भला होगा।
जब भली बात ही नहीं भाती॥

ढंग मन मार बैठ रहने का।
है गया रोम रोम में रम सा॥
छूट पाईं लतें न आलस की।
है भला कौन आलसी हम सा॥

परख

खोट कैसे न खूंट में बँधती।
मन गया है खुटाइयों में सन॥
बात क्यों काटकूट की न पड़े।
है भरा कूट कूट पाजीपन॥

जब पड़ी बान आग बोने की।
आग कैसे भला नहीं बोता॥
मिल सका ढंग ढंगवालों में।
ढंग बेढंग में नहीं होता॥

जूठ खाना जिसे रहा रुचना।
किस लिये वह न खायगा जूठा॥
है उसे झूठ बोलना भाता।
बोलता झूठ क्यों नहीं झूठा॥

जा रही है लाज तो जाये चली।
लाज जाने से भला वह कब डरा॥
घट रहा है मान तो घटता रहे।
है निघरघटपन निघरघट में भरा॥

चूल से चूल हैं मिला देते।
रंगतें ढंग से बदलते हैं॥
चाल चालाकियां भरी कितनी।
कब न चालाक लोग चलते हैं॥

पास तब कैसे फटक पाती समझ।
जब कि जी नासमझियों में ही सने॥
तब गले कैसे न उल्लूपन पड़े।
उल्लुओं में बैठ जब उल्लू बने॥

किस तरह बेऐब कोई बन सके।
बेतरह हैं ऐब पीछे जब लगे॥
कम नहीं उल्लू कहाता ही रहा।
काठ के उल्लू कहाने अब लगे॥

बात बतलाई सुनें, समझें, करें।
कर न बेसमझी समझ की जड़ खनें॥
जो बदा है क्यों बदा मानें उसे।
हम न बोदापन दिखा बोदे बनें॥

बाल की खाल काढ़ खल बन कर।
खल किसे बेतरह नहीं खलते॥
चाल चल छील छील बातों को।
छल छली कर किसे नहीं छलते॥

पेच भर पेच पाच करने में।
क्यों सभी का न सिर धसा होगा॥
है भरी काट पीट रग रग में।
क्यों न कपटी कपट भरा होगा॥

वे और हम

चाहते हैं यह तरैया तोड़ लें।
बेतरह मुँह की मगर हैं खा रहे॥
हैं उचक कर हम सरग छूने चले।
पर रसातल को चले हैं जा रहे॥

क्यों सुझाये भी नहीं है सूझता।
बीज हैं बरबादियों के बो गये॥
क्यों अँधेरा आँख पर है छा गया।
किस लिये हम लोग अंधे हो गये॥

एक है जाति के लिये जीता।
दूसरा जाति लग नहीं लगता॥
एक है हो रहा सजग दिन दिन।
दूसरा जाग कर नहीं जगता॥

हैं लट्टू हम यूनिटी पर हो रहे।
और वह लट बेतरह है पिट रही॥
सुध गँवा सारी हमारी जाति अब।
है हमारे ही मिटाये मिट रही॥

जाति जीतें सुन उमग हैं वे रहे।
जाति-दुखड़े देख हम ऊबे नहीं॥
आज दिन सूबे चला हैं वे रहे।
हैं हमारे पास मनसूबे नहीं॥

जाति अपनी सँभालते हैं वे।
हम नहीं हैं सँभाल सकते घर॥
क्या चलें साथ दौड़ने उन के।
जो कि हैं उड़ रहे लगा कर पर॥

क्यों न मुँह के बल गिरें खा ठोकरें।
छा अँधेरा है गया आँखों तले॥
हो न पाये पाँव पर अपने खड़े।
साथ देने चालवालों का चले॥

लुट रहा है घर, सगे हैं पिट रहे।
खोलते मुँह बेतरह हैं डर रहे॥
मौत के मुँह में चले हैं जा रहे।
हैं मगर हम दूसरों पर मर रहे॥

दौड़ उन की है बिराने देस तक।
घूम फिर जब हम रहे तब घर रहे॥
हम छलाँगें मार हैं पाते नहीं।
वे छलाँगें हैं छगूनी भर रहे॥

वह कहीं हो पर गले का हार है।
इस तरह वे जाति-रँग में हैं रँगे॥
रंगतें इतनी हमारी हैं बुरी।
हैं सगे भी बन नहीं सकते सगे॥

है पसीना जाति का गिरता जहाँ।
वे वहाँ अपना गिराते हैं लहू॥
जाति-लोहू चूस लेने के लिये।
कब नहीं हम जिन्द बनते हूबहू॥

जाति-दुख से वे दुखी हैं हो रहे।
क्यों न वह हो दूर देसों में बसी॥
देख कर भी देख हम पाते नहीं।
जा रही है जाति दलदल में धँसी॥

बावलों जैसा बना उन को दिया।
दूर से आ जाति-दुख के नाम ने॥
आँख में उतरा नहीं मेरे लहू।
जाति का होता लहू है सामने॥

जाति के ऊँचे उठाने के लिये।
बाग अपनी कब न वे खींचे रहे॥
नीच बन आँखें बहुत नीची किये।
हम गिराते जाति को नीचे रहे॥

अठकपालीपन दिखा हैं वे रहे।
है अजब औंधी हमारी खोपड़ी॥
वे महल अपने खड़े हैं कर रहे।
हम रहे हैं फूंक अपनी झोपड़ी॥

हों भले हो वे बिदेसों में बसे।
प्यार में हैं जाति के पूरे सने॥
बात अपनी बेकसी की क्या कहें।
देस में भी हम बिदेसी हैं बने॥

धाक अपनी बाँध हैं जग में रहे।
एक झंडे के तले वे हो खड़े॥
फूट है घर में हमारे पड़ रही।
हैं लुढ़कते जा रहे घी के घड़े॥

धर्म्म पर हो रहे निछावर हैं।
आज वे बोल बोल कर हुरें॥
हम अधूरे बुरे धुरे पकड़े।
धर्म के हैं उड़ा रहे धुरें॥

क्यों न हों बहु देस में फैले हुए।
हैं मगर वे एक बंधन में बँधे॥
साध रहते देस में हम से नहीं।
एकता के मंत्र साधे से सधे॥

दूसरों की जड़ जमाने के लिये।
क्यों बहँक कर आप अपनी जड़ खनें॥
हम नहीं कहते कि लोहा लोग लें।
पर न चुम्बक के लिये लोहा बनें॥

पोल

दूसरे बीर बन भले हो लें।
बीरता तो हमीं दिखाते हैं॥
हम उड़ाते अबीर हैं अड़ कर।
और बढ़ कर कबीर गाते हैं॥

मान मरजाद है मरी जाती।
आबरू का निकल रहा है दम॥
भाँड़ भड़वे बनें न तब कैसे।
जब कि गाने लगे भड़ौवे हम॥

भाव के रसभरे कलेजे में।
हैं सुरुचि की जहां वहीं धारें।
गालियों से भरी, बुरी, गंदी।
होलियां गा न गोलियां मारें॥

जाति का मान रह सका जिन से।
मान उन का कभी न कर दें कम॥
कर धमा चौकड़ी भली रुचि से।
क्यों मचा दें धमार गा ऊधम॥

मोड़ लें मुँह न आदमीयत से।
तोड़ देवें न ढंग का तागा॥
बात यह कान से सुनें रसिया॥
नास रस का करें न 'रसिया' गा॥

बेसुधे इतने न बन जावें कभी।
जो बुरा धब्बा हमें देवे लगा॥
किस लिये हम ताल पर नाचा करें।
चाल बिगड़े क्यों बुरे चौताल गा॥

दल बहँक जाय दिल-चलों का जो ।
तो न बरसें उमड़ घुमड़ बादल ॥
जाय वह मुँह तुरंत जल, जिस में ।
गा बुरी कजलियां लगे काजल ॥

मा, बहन, बेटियां निलज न बनें ।
इस तरह से हमें न लजवावें ॥
हैं लगातार तालियां बजती ।
गालियां गा न गालियां खावें ॥

जाति राह के रोड़े

ईसवी पंजा

आँख की पट्टी नहीं तब भी खुली ।
बिछ रहे हैं जाल अब भी नित नये ॥
क्या कहें ईसाइयों की चाल को ।
लाल पंजे से निकल लाखों गये ॥

तब सुनायें जली कटी तो क्या।
जब पड़े हैं कड़े शिकंजे में॥
आग ए लोग जब लगा घर में।
आ गए हैं मसीह-पंजे में॥

आज हम जिन के घटाये हैं घटे।
बढ़ गई जिन के बढ़ाये बेकसी॥
बात यह अब भी बसी जी में कहां।
जाति पंजे में उन्हीं के है फँसी॥

जो हमारे रत्न ही हैं लूटते।
जो कि हैं ढलका रहे घी का घड़ा॥
ठेस जी को लग सकी यह सोच कब।
देस पंजे में उन्हीं के है पड़ा॥

है कलेजा नुच रहा बेचैन हूं।
हो रहे हैं रोंगटे फिर फिर खड़े॥
हम निकालें तो निकालें किस तरह।
बेतरह ईसाइयत पंजे गड़े॥

शेर जैसे क्यों न ईसाई बनें।
हिन्दियों से मेमने क्या हैं कहीं॥
पा सदी यह बीसवीं इस हिन्द में।
फैलता क्यों ईसवी पंजा नहीं॥

डाल कर ईसाइयत के जाल में।
तब भला भौंहें चढ़ाते क्यों न वे॥
जी रहा ईसाइयों का जब बढ़ा।
तब भला पंजा बढ़ाते क्यों न वे॥

घाव पर हैं घाव गहरे कर रहे।
चुभ रहे हैं वे बहुत बेढब फँसे॥
दुख रहे हैं और दुख हैं दे रहे।
बेतरह हैं ईसवी पंजे धँसे॥

हो गये हैं शेर वे, तो हर तरह।
क्यों न देवेंगे हमें बेकार कर॥
क्या मसीहाई मसी ही करेंगे।
मार देंगे और पंजे मार कर॥

ताली

तो भलाई क्या हुई रगड़े बढ़े ।
नींव झगड़े की अगर डाली गई ॥
हाथ के तोते किसी के जब उड़े ।
तब बजाई किस लिये ताली गई ॥

झूठ के सामने झुके सिर क्यों ।
फूल से लोग क्यों उसे न सजें ॥
सच कहें, क्यों न गालियां खावें ।
तालियां क्यों न बार बार बजें ॥

प्यालियां जो हैं बड़े आनन्द की ।
डालियां वे क्यों कपट छल की बनें ॥
भर बहुत मैले मनों के मैल से ।
तालियां क्यों नालियां मल की बनें ॥

हितभरी बात जग-हितू की सुन।
भर गई लोक-भक्ति की थाली॥
सज उठी फूल से सजी पगड़ी।
बज उठी धूम धाम से ताली॥

धूम से बेढंगपन है चल रहा।
हैं नहीं बेहूदगी आँखें खुली॥
तोड़ देने के लिये हित की कमर।
तालियों की तड़तड़ाहट है तुली॥

डालियां अब वे न फूलों की रहीं।
भर गईं उन को घुनों में गालियां॥
तूल हैं तलबेलियों को दे रहो।
ताल कर बजती नहीं अब तालियां॥

तब भला वह किस लिये बजती रही।
लोग उसको जब न रस-ढाली कहें॥
खोल पाई जब न ताला प्यार का।
तब उसे हम किस तरह ताली कहें॥

देस को, जाति को, समाजों को।
क्यों कलह-फूल से सजाते हैं॥
लाग को बेलियों तले बैठे।
लोग क्यों तालियां बजाते हैं॥

लाग से वे जल रहे हैं तो जलें।
क्यों जला घर सुन रहे हैं गालियां॥
जी जला कर जाति के सिरताज का।
क्यों जले तन हैं बजाते तालियां॥

बेतुकेपन, बांकपन, बेहूदपन।
बैलपन को हैं किया करती हवा॥
हैं बलायें बावलेपन के लिये।
तालियां हैं बेदहलपन की दवा॥

चेलियां औ सहेलियां दोनों।
बोलियों के सकल कला की हैं॥
रीझ की और खीझ आँखों की।
तालियां पुतलियां बला की हैं॥

भर उमंगें बना दुगूना दिल।
रख बड़े मान साथ मुँहलाली॥
बेखुली आँख खोल देती है।
बात तौली हुई तुली ताली॥

वोट

वोट देते हैं टके की ओट में।
हैं सभाओं में बहुत ही ऐंठते॥
कुछ उठल्लू लोग ऐसे हैं कि जो।
हैं उठाते हाथ उठते बैठते॥

वोट देने से उन्हें मतलब रहा।
एतबारों को न क्यों लेवें उठा॥
वे उठाते हाथ योंही हैं सदा।
क्यों न उन पर हाथ हम देवें उठा॥

वोट देने का निकम्मा ढंग हो।
है उन्हें बेआबरू करता न कम॥
हैं उठाते तो उठायें हाथ वे।
क्यों उठा देवें पकड़ कर हाथ हम॥

वोट की क्या चोट लगती है नहीं।
क्यों कमीने बन कमाते हैं टका॥
नीचपन से जब लदा था बेतरह।
तब उठाये हाथ कैसे उठ सका॥

वोट दें पर खोट से बचते रहें।
क्यों करें वह, लिम लगे जिस के किये॥
जब कि ऊपर मुँह न उठ सकता रहा।
हाथ ऊपर हैं उठाते किस लिये॥

चालाक लोग

जो चुरायें, करें न हित जी से।
जाति को क्यों जवाब दें सूखे॥
नाम पाकर नमकहराम न हों।
नाम बेंचें न नाम के भूखे॥

जो हितू बन बना बना बातें।
जाति-हित के लिये गये बीछे॥
वे करें हित न तो अहित न करें।
हों न बदनाम नाम के पीछे॥

वह रसातल क्यों चला जाता नहीं।
देस-हित जिसका बतोलों में सना॥
जो बिगाड़े बात बनती जाति की।
बात रखने के लिये बातें बना॥

क्यों थपेड़े उन्हें नहीं लगते।
जो न थे बन बखेड़िये डरते॥
जाति-हित के लिये खड़े हो कर।
जो बखेड़े रहे खड़े करते॥

जो भली राह है हमें भूली।
तो बुरे पंथ में न पग देवें॥
बन लुटेरे न जाति को लूटें।
कर ठगी जाति को न ठग देवें॥

कर दिखायें उसे कहें जो हम।
जीभ मुँह में कभी नहीं दो हो॥
है बुरी बात ढोंग बहुरंगी।
देस-हित-रंग में रँगी जो हो॥

क्यों हमारी कपट-भरी करनी।
जाति-सिर के लिये पसेरी हो॥
देस-हित के लिये चले मचले।
चाल भूचाल सी न मेरी हो॥

आठ आठ आँसू

चार जाति

जो अजब जोत था जगा देता।
जाति में जाति के बसेरे में॥
देवता जो कि है धरातल का।
क्यों पड़ा है वहीं अँधेरे में॥

जो वहाँ अपना गिराती थी लहू।
जाति का गिरता पसीना था जहाँ॥
अब दिखा पड़ती सपूती वह नहीं।
इन दिनों वह राजपूती है कहाँ॥

जो बसा जाति को रही बसती।
देस में बाढ़ बीज जो बोवे॥
बेंच कर नाम बेबसों सा बन।
बैस वह बैस किस लिये खोवे॥

जिस जगह काँटा मिला बिखरा हुआ।
निज कलेजा थे बिछा देते वहाँ॥
जो कि सेवा पर निछावर हो गये।
आज दिन वे जाति-सेवक हैं कहाँ॥

काँपता और थरथराता है।
है फिसलता कभी, कभी छिकता॥
तब भला जाति हो खड़ी कैसे।
जब कि हैं पाँव ही नहीं टिकता॥

कुछ अजब है नहीं, हमें रोटी।
पेट भर आज जो नहीं मिलती॥
तब भला किस तरह कमाई हो।
जाति की जाँघ जब कि है हिलती॥

खुल सकें तो भला खुलें कैसे।
बेहतरी की रुकी हुई राहें॥
जाति को किस तरह निबाहें तब।
जब कि बेकार हो गईं बाहें॥

बात न्यारी बहुत ठिकाने की।
दूर की सोच किस तरह पावे॥
किस तरह जाति तब न कूर बने।
जब कि सिर चूर चूर हो जावे॥

क्यों न पड़ जाँय तब रगें ढीली।
क्यों भला सिर न घूम जाता हो॥
तब भला जाति-तन पले कैसे।
जब कि मुँह में न अन्न जाता हो॥

क्यों न बहँके सब सहे बिगड़े बहुत।
क्यों नहीं सरबस गँवा जीते मरे॥
किस तरह से जाति तब सँभले भला।
बात बे-सिर-पैर की जब सिर करे॥

चार नाते

चाहिये था सींचना जल बन जिसे।
तेल वह उस के लिये कैसे बने॥
तब भला हम क्यों न जायँगे उजड़।
जब कि जोड़ू ही हमारी जड़ खने॥

घरनियां हैं सभी सुखों की जड़।
रूठ सुख-सोत वे सुखायें क्यों॥
निज कलेजा निकाल देवें जो।
वे कलेजा कभी कँपायें क्यों॥

भूल जायें न नेकियां सारी।
बाप के सब सलूक को सोचें॥
हो गईं रोटियां अगर महँगी।
बेटियाँ तो न बोटियाँ नोचें

वे पहन लें न, या पहन लेवें।
चूड़ियां किस तरह मरद पहनें॥
नेह-गहने अगर पसंद नहीं।
चौंक पत्थर हनें न तो बहनें॥

जो जिलायें उलझ न उलझायें।
और बेअदबियां न सिखलायें॥
वे मुआ दें हमें जनमते ही।
पर बलायें बनें न मातायें॥

दूसरे मोड़ मुँह भले ही लें।
मा किसी को कभी न मुँह मोड़े॥
रंग बदले तमाम दुनिया का।
देवतापन न देवता छोड़े॥

जब बदी पर कमर कसे घरनी।
सुख फिरे किस तरह न कतराया॥
तब भला वह सँभल सके कैसे।
जब करे देह पर सितम साया॥

मुँह सदुख ताक ताक बहनों का।
तो न नाते तमाम क्यों रोवें॥
चोर जी में अगर घुसे उन के।
जो सराबोर नेह में होवें॥

हित करें जो बेटियां हित कर सकें।
नित मचा कर द्वंद वे न दुचित करें॥
तब भला कैसे ठिकाने चित रहे।
जब हमें हित की पुतलियां चित करें॥

हमारी देबियां

जाति की, कुल की, धरम की, लाज की।
बेतरह ए ले रही हैं फबतियां॥
हैं लगाती ठोकरें मरजाद को।
देबियां हैं याकि ए हैं बीबियां॥

हम उन्हें तब देवियां कैसे कहें।
बेतरह परिवार से जब तन गईं॥
बीबिआना ठाट है बतला रहा।
आज दिन वे बीबियां हैं बन गईं॥

चूस करके सब सलूकों का लहू।
नेह-साँसें चाव से गिनने लगीं॥
तब भला न मसान घर कैसे बने।
डायनें जब देवियां बनने लगीं॥

क्या न है फेर यह समय का ही।
देवियां जाँय जो चुड़ैलें बन॥
नाम के साथ वे लिखें देवी।
जो रखें नाम को न देवीपन॥

सब घरों को दें सरग जैसा बना।
लाल प्यारे देवतों जैसा जनें॥
अब रहे ऐसे हमारे दिन कहां।
देवियां जो देवियां सचमुच बनें॥

निघरघट

आज दिन तो अनेक ऊंचों की।
रोटियां नाम बेंच हैं सिंकती॥
क्या कहें बात बेहयाई की।
हैं खुले आम बेटियां बिकती॥

हैं कहीं बेढंगियां ऐसी नहीं।
है भला हम से कहां पर नीच नर॥
लूटते हैं सैंत मेंत हमें सभी।
छूटते हैं खेत बेटी बेंच कर॥

किस तरह हम को भला कुछ सूझता।
क्योंकि हम में आँख की ही है कमी॥
काठ के पुतले कहाँ हम से मिलें।
बेंचते हैं आँख की पुतली हमीं॥

करम कर मन के मसोसों के बिना।
जो कभी दामाद को हैं मूसते॥
कुल बड़ाई के लहू से हाथ रंग।
हैं लहू वे बेटियों का चूसते॥

आज कितनी ही हमारी चाह पर।
बेटियां बहनें सभी हैं खो रही॥
क्या भला देंगे निछावर हम उन्हें।
आप ही वे हैं निछावर हो रही॥

बेटियां बहनें बिकें धन के लिये।
भाव ऐसा क्यों किसी जी में जगे॥
जो लगा दे लात कुल की लाज को।
लत बुरी ऐसी न दौलत की लगे॥

किस लिये तो पले न बेटी से।
जो दबा पाप-भार से तन हो॥
मान का मान तब रखे कैसे।
जब कि पामाल माल से मन हो॥

बेवायें

जाति का नास बेतरह न करें।
दें बना बेअसर न सेवायें॥
जो न बेहद उन्हें दबायें हम।
तो व्वबायें बनें न बेवायें॥

थे उपज पाये दयासागर जहाँ।
अब निरे पत्थर उपजते हैं वहाँ॥
है कलेजा तो हमारे पास ही।
पास बेवों के कलेजा है कहाँ॥

मर्द चाहें माल चाबा ही करें।
औरतें पीती रहेंगी माँड़ ही॥
क्यों न रँडुये ब्याह कर लें बीसियों।
पर रहेगी राँड़ सब दिन राँड़ ही॥

खीज बेबस और बेवों पर अबस।
हम गिरा देवें भले ही बिजलियां॥
पर समझ लेवें किसी की भी सदा।
रह सकीं घी में न पाँचों उँगलियां॥

हम नहीं आज भी समझ पाये।
जाति की किस तरह करें सेवा॥
हो बहुत बंस क्यों न बेवारिस।
जब कि बेवा बनी रहें बेवा॥

जाति जिस से चल बसा है चाहती।
आज भी छूटीं कुचालें वे कहां॥
क्यों वहां होंगे न लाखों दुख खड़े।
लाखहा बेवा बिलखती हों जहाँ॥

जब कि बेवों का न बेड़ा पार कर।
बेसुधी की धार में है बह चुकी॥
आज दिन भी जाग जब सकती नहीं।
जाति जीती जागती तो रह चुकी॥

बेटियां

हैं तभी से पड़ रहीं जंजाल में।
जिन दिनों वे थीं नहीं पूरी खिली॥
धूल में ही दिन ब दिन हैं मिल रहीं।
फूल के ऐसी हमारी लाड़िली॥

हैं सदा बिकती भुगतती दुख बहुत।
धूम है उन के उखाड़ पछाड़ की॥
हम भले ही लड़खड़ाती जीभ से।
बात कह लें लड़कियों के लाड़ की॥

बेटियां छिलते कलेजे को कभी।
सामने आ खोल भी सकती नहीं॥
किस लिये हम फेर दें उन पर छुरी।
जो कि मुँह से बोल भी सकती नहीं॥

बेटियां जो सकीं नहीं चिल्ला।
आ रहा दुख बहुत अँगेजे पर॥
तो कभी क्यों न हाथ रख देखें।
हम उछलते हुए कलेजे पर॥

नेक बेटी के लिये भी काठ बन।
कब सके हम धूल में रस्सी न बट॥
आज हम हैं चट उसी को कर रहे।
जो नहीं दिखला सकी जी की कचट॥

मांस का वह है न, औ वह पास है।
जिस किसी के, हैं नहीं वे भी सगे॥
जो कलेजा है कलप जाता नहीं।
ठेस लड़की के कलेजे में लगे॥

खेह होते देख सुन्दर देह को।
नेह-धारें हैं नहीं जिस में बहीं॥
जो न पिघला देख कलियां सूखती।
वह कलेजा है कलेजा ही नहीं॥

बाप ही डाह जो बिपद देवे।
तो किसे वह पुकारने जाती॥
आह ! सारी विपत्तियों में ही।
जो रही बाप बाप चिल्लाती॥

उस बुरी चाह का बुरा होवे।
जो कि दे बोर बेटियां कारी॥
चाहते हम जिसे रहे उस की।
हो गईं चूर चाहतें सारी॥

मान है, उन में अभी मरजाद है।
बेटियों को मान कैसे लें मिलें॥
तो भला कैसे न माँगें मौत वे।
जो जवानी की उमंगें ही पिसें॥

लड़कियों को न बेतरह लूटें।
भूल उन का लहू न हम गारें॥
वे अगर हाथ का खेलौना हैं।
तो न उन को खेला खेला मारें॥

क्यों न यह सोचा गया, हम किस लिये ।
सुख सदा विलसें, सदा वे दुख सहें ॥
क्यों कराते हम फिरें कायाकलप ।
क्यों कलपती बेटियां बहनें रहें ॥

क्यों कलेजा थाम कर रोवें न वे ।
बेटियां कैसे न तो दुख में सनें ॥
मा बने अनजान सब कुछ जान कर ।
आँख होते बाप जो अंधे बनें ॥

दुख भला किस तरह कहें उस का ।
जो पड़ी हो बिपत्ति-घानी में ॥
दुख उठा मार मार मन अपना ।
जो मरी हो भरी जवानी में ॥

क्यों न दुख पाँव तोड़ कर बैठे।
क्यों वहाँ हो न मौत की सेवा॥
एक दो क्या, जहां बहुत सी हों।
चार या पांच साल की बेवा॥

जब नहीं आबाद बेवायें हुईं।
तब भला हम किस तरह आबाद हों॥
क्यों भला बरबाद होवेंगे न हम।
बेटियां बहनें अगर बरबाद हों॥

किस तरह से जाति बिगड़े भी न तो।
जब कि बेवायें बिगड़ती ही रहें॥
हद हमारी बेहयाई की हुई।
जो कसाला बेटियां बहनें सहें॥

जाति कैसे भला न डूबेगी।
किस लिये वह न जाय दे खेवा॥
जब नहीं सालती कलेजे में।
चार औ पांच साल की बेवा॥

आज बेवा हिन्दुओं की हीन बन।
दूसरों के हाथ में है पड़ रही।
जन रही है आँख का तारा वही।
जो हमारी आँख में है गड़ रही॥

लाज जब रख सके न बेवों की।
तब भला किस तरह लजायें वे॥
घर बसे किस तरह हमारा तब।
और का घर अगर बसायें वे॥

गोद में ईसाइयत इसलाम की।
बेटियां बहुयें लिटा कर हम लटे॥
आह! घाटा पर हमें घाटा हुआ।
मान बेवों का घटा कर हम घटे॥

जो बहँक बेवा निकलने लग गई।
पड़ गया तो बहुतियों का काल भी॥
आबरू जैसा रतन जाता रहा।
खो गये कितने निराले लाल भी॥

देखता हूं कि जाति डूबेगी।
है जमा नित्त हो रहा आँसू॥
लाखहा बेगुनाह बेवों की।
आँख से है घड़ों बहा आँसू॥

रंज बेवों का देखती बेला।
बैठती आँख, टूटती छाती॥
जो न रखते कलेजे पर पत्थर।
आँख पथरा अगर नहीं जाती॥

नापाकपन

देख कुल की देवियां कँपने लगीं।
रो उठी मरजाद बेवों के छले॥
जो चली गंगा नहाने, क्यों उसे।
पाप-धारा में बहाने हम चले॥

रंग बेवों का बिगड़ते देख कर।
किस लिये हैं ढंग से मुँह मोड़ते॥
जो सुघर तीरथ बनाती गेह को।
क्यों उसे हैं तीरथों में छोड़ते॥

जोग तो वह कर सकेगी ही नहीं।
जिस किसी को भोग ही की ताक हो॥
जो हमीं रक्खें न उस का पाकपन।
पाक तीरथ क्यों न तो नापाक हो॥

जब कि बेवा हैं गिरी ही, तो उन्हें।
दे न देवें पाप का थैला कभी॥
मस्तियों से चूर दिल के मैल को।
तीरथों को कर न दें मैला कभी॥

जो कलेवा काल का है बन रहा।
वह बने खिलती कली का भौंर क्यों॥
मौर सिर पर रख बनी का बन बना।
बेहयाओं का बने सिरमौर क्यों॥

छाँह भी तो वह नहीं है छाँड़ती।
क्योंकि बन सकता नहीं अब छैल तू॥
ढोठ बूढ़े लाद बोझा लाड़ का।
क्यों बना अलबेलियों का बैल तू॥

तब भला क्या फेर में छबि के पड़ा।
आँख से जब देख तू पाता नहीं॥
तब छछूंदर क्या बना फिरता रहा।
जब छबीली छाँह छू पाता नहीं॥

दिन ब दिन है सूखती ही जा रही।
हो गई बेजान बूढ़े की बहू॥
जब कि दिल को थाम कर दूलह बने।
तब न लेवें चूस दुलहिन का लहू॥

चाहतें कितनी बहुत कुचली गईं।
क्यों न टूटी टांग बूढ़े टेक की॥
एक दुनिया से उठा है चाहता।
और है उठती जवानी एक की॥

राज की, साज बाज, सज धज की।
है न वह दान मान की भूखी॥
मूढ़ बूढ़े करें न मनमानी।
है जवानी जवान की भूखी॥

निज लट्टू की देख कर सूरत लटी।
आँख में उस की उतरता है लहू॥
आँख बूढ़े की भले ही तर बने।
देख रस की बेलि अलबेली बहू॥

कच्चे फल

हो गया ब्याह लग गईं जोंकें।
फूल से गाल पर पड़ी झाईं।
सूखती जा रहीं नसें सब हैं।
भीनने भी मसें नहीं पाईं॥

पड़ गया किस लिये खटाई में।
क्यों चढ़ी रूप रंग की बाई॥
फिर गई काम की दुहाई क्यों।
मूंछ भी तो अभी नहीं आई॥

लथेड़

हैं बहुत बच्चे भटकते फिर रहे।
औरतें भी ठोकरें हैं खा रही॥
अब भला परदा रहेगा किस तरह।
जो उठेगा आँख का परदा नहीं॥

वे बिचारी फूल जैसी लड़कियां।
जो नहीं बलिदान होते भी अड़ीं॥
आँखवाले हम तुम्हें कैसे कहें।
जब न आँखें आज तक उन पर पड़ीं॥

बेबसी बेबिसात बेवों की।
सामने जब बिसूरती आई॥
सिर गया घूम, बन गये बुत हम।
बात मुँह से नहीं निकल पाई॥

देख कर नीच हाथ से नुचती।
एक खिलती हुई अबोल कली॥
चाहिये तो न खोलना फिर मुँह।
बात मुँह से अगर नहीं निकली॥

सोच ले बात, मत सितम पर तुल।
तू उन्हें दे न भीख की झोली॥
तब सके बोल और बेटी क्यों।
जब सकी कुछ न बोल मुँहबोली॥

बेजोड़ ब्याह

बंस में घुन लगा दिया उस ने।
औ नई पौध की कमर तोड़ी॥
जाति को है तबाह कर देती।
एक बेजोड़ ब्याह की जोड़ी॥

जो कली है खिल रही उस के लिये।
बर पके, सूखे फलों जैसा न हो॥
दो दिलों में जाय जिस से गाँठ पड़।
भूल गँठजोड़ा कभी ऐसा न हो॥

है उसे चाह रंगरलियों की।
हैं इसे उलझनें नहीं थोड़ी॥
क्यों न जाते उधेड़बुन में पड़।
एक अल्हड़ अधेड़ की जोड़ी॥

आह ! घुन देह में लगा देगी ।
औ बनायेगी बाघ को गोरू ॥
आठ दस साल के जमूरे को ।
बीस बाईस साल की जोरू ॥

है समय पर फूलना फलना भला ।
बात कोई है न असमय की भली ॥
अधखिले सब फूल ही हैं अधखिले ।
है सभी कच्ची कली कच्ची कली ॥

आह ! बचपन से पली जो गोद में ।
वह बिना ही आग सब दिन क्यों जले ॥
जो कि जनने जोग बच्चे के हुई ।
बाँध दें उस को न बच्चे के गले ॥

पाप को लोग भांप लेते हैं ।
पत रहेगी कभी न पत खोये ॥
बेटियां ब्याह दूधपीते से ।
बन सकेंगे न दूध के धोये ॥

मिल सकेगा सुख न वह धन धाम से।
दुख न मेटेंगी मुहर की पेटियां॥
तज सयानप कमसिनों से किस लिये।
ब्याह हम देवें सयानी बेटियां॥

है बड़ी बात ही बड़ा करती।
चाहिये सूझ बूझ बड़कों को॥
हो सयाने करें लड़कपन क्यों।
लड़कियां दें कभी न लड़कों को॥

लोग बेढंग बेसमझ हम से।
मिल सकेंगे कहीं न ढूंढ़े से॥
आप ही हम तबाह होते हैं।
बेटियां ब्याह ब्याह बूढ़े से॥

बूढ़े का ब्याह

आप जो वे मर रहे हैं तो मरें।
क्यों मुसीबत बेमुँही सिर मढ़ेंगे॥
वे चेताये क्यों नहीं हैं चेतते।
जो चिता पर आज कल में चढ़ेंगे॥

हो बड़े बूढ़े न गुड़ियों को ठगें।
पाउडर मुँह पर न अपने वे मलें॥
ब्याह के रंगीन जामा को पहन।
बेइमानी का पहन जामा न लें॥

छोकरी का ब्याह बूढ़े से हुए।
चोट जी में लग गई किस के नहीं॥
किस लिये उस पर गड़ाये दाँत वह।
दाँत मुँह में एक भी जिस के नहीं॥

बेटियों को बेंच बेवों को सता।
क्या कलेजे में नहीं चुभती सुई॥
नाम अपना हम हँसाते क्यों रहें।
है हँसी थोड़ी नहीं अब तक हुई॥

लताड़

क्या किसी खोह में पड़ी पा कर।
लड़कियाँ लोग हैं उठा लाते॥
जो बड़े ही कपूत लड़कों से।
हैं तिलक बेधड़क चढ़ा आते॥

हैं न भलमंसियां जिन्हें प्यारी।
है जिन्हें रूपचन्द से नाता॥
जब न मुट्ठी गरम हुई उन की।
क्यों भला तब तिलक न फिर आता॥

नीचपन, तंगपन, निठुरपन का।
है जिन्हों ने कि ले लिया ठीका॥
न्योत करके बिपद बुलाते हैं।
लोग उनके यहां पठा टीका॥

लोग इतने गिरे जहां के हैं।
कौड़ियों तक सहेज घर भेजा॥
पिस गईं लड़कियाँ जहाँ जा कर।
है वहां भेजना तिलक बेजा॥

पास जिन के नहीं कलेजा है।
बेटियां बेंच जो अघाते हैं॥
वे लगा कर कलंक का टीका।
मोल टीका बहुत लगाते हैं॥

क्या सयानी हुई नहीं लड़की।
लाख फटकार ऐसे कच्चे को॥
आप वह बन गया निरा बच्चा।
दे तिलक आज एक बच्चे को॥

जो भलो राह पर चला न सके।
तो बुरी राह भी न बतलाये॥
हो तिलक एक नामवर कुल के।
क्या तिलक लंठ के यहां लाये॥

लड़कियां बोल जो नहीं सकतीं।
तो बला में उन्हें फँसायें क्यों॥
भेज करके बुरी जगह टीका।
हम उन्हें धूल में मिलायें क्यों॥

जन्मलाभ

लोकसेवा

हड्डियां तो काम देती हैं नहीं।
काम आता है न उस का चाम ही॥
वह बना है लोकसेवा के लिये।
साथ देना हाथ का है काम ही॥

जो उसे उस का सहारा हो नहीं।
तो सकेगा काम पल भर चल नहीं॥
जो न सेवा तेल बल देवे उसे।
तो सकेगा हाथ दीया बल नहीं॥

तो पनपता न हित-हवा पा कर।
मिल गये प्यार-जल नहीं पलता॥
जो न सेवा सहायता देती।
हाथ-पौधा न फूलता फलता॥

तब छबीले हाथ क्या बनते रहे।
जो न सेवा कर छगूनी छबि बनी॥
है कलस वह जगमगाती जोत यह।
है चँदोवा हाथ सेवा चाँदनी॥

एक बरसात है अगर प्यारी।
दूसरा तो हरा भरा बन है॥
जड़ हुए हाथ के लिये जग में।
लोक-सेवा जड़ी सजीवन है॥

जो जड़ाऊ ताज बतलावें उसे।
तो कहें कँलगी इसे न्यारी बड़ी॥
हाथ शमले के सजाने के लिये।
लोकसेवा मोतियों की है लड़ी॥

राज-सुख तो न दे सकेंगे सुख।
लोक-हित में रमा नहीं जो मन
धन्य जो हों न हाथ सेवा कर।
क्या बने तो धनी कमा कर धन॥

छोड़ कर भाव देवतापन का।
दैंतपन किस लिये न दिखलाता॥
साथ है जब न लोक-सेवा बल।
हाथ-बल तब न क्यों बला लाता॥

हाथ को अपने जलाते क्या रहे।
कर भली करतूत दिखलाई न जो॥
तो लगाते छाप क्या थे दूसरे।
लोक-सेवा-छाप लग पाई न जो॥

धन कमायें तो करें उपकार भी ।
यह अगर है काल तो वह लाल है ॥
धन तजें पर लोक-सेवा तज न दें ।
हाथ का यह मैल है वह माल है ॥

लोक-सेवा ललक रहे करता ।
काल जाये न काल का भी बन ॥
दे कमल क्यों न छोड़ कमला को ।
हाथ कोमल तजे न कोमलपन ॥

दूसरे तोर मोर क्यों न करें ।
क्यों नहीं हाथ तुम अलग रहते ॥
क्यों नहीं पैर प्यार-धारा में ।
लोक-सेवा तरंग में बहते ॥

जब लगे तब हाथ परहित में लगे ।
है जनमता जीव जग-हित के लिये ॥
लोक क्या, परलोक भी बन जायगा ।
जी लगा कर लोक की सेवा किये ॥

हिल गया उन के हिलाने से जगत।
देख कर दुख दूसरों का जो हिले॥
ले बलायें लोग सारे लोक की।
जाँयगे बल लोक-सेवा-बल मिले॥

है भला धन लगे भलाई में।
हो भले काम पर निछावर तन॥
लोभ यश लाभ का हमें होवे।
लोक-हित-लालसा लुभा ले मन॥

जातिसेवा

काम मुँह देख देख कर न करे।
मुँह किसी और का कभी न तके॥
जातिसेवा करे अथक बन कर।
न थके आप औ न हाथ थके॥

हो भला, वह हो भलाई से भरा।
भाव जो जी में जगाने से जगे॥
जातिहित, जनहित, जगतहित में उमग।
जी लगायें जो लगाने से लगे॥

कौन ऐसा भला कलेवा है।
वह भली है अमोल मेवा से॥
फेर में पड़ न जाय जन कोई।
फिर न जी जाय जाति-सेवा से॥

नाम सेवा का न वे लें भूल कर।
देख दुख जिन के न दिल हों हिल गये॥
बोझ उन पर रख बनें अंधे नहीं।
बेतरह कंधे अगर हों छिल गये॥

जाति-हित में ललक लगे कैसे।
ले लुभा जब कि लाभ सा मेवा॥
जब कि आराम में रमा मन है।
हो सकेगी न लोक की सेवा॥

नींव है वह बेहतरी-दीवार की।
है सहज सुख-हार की सुन्दर लड़ी॥
है जगत के जीत लेने की कला।
जाति-सेवा जाति-हित की है जड़ी॥

जो रहेगा जाति-हित-पौधा हरा।
तो हरा मुख रख, सकेंगे रह भले॥
हम सकेंगे हर तरह से फूल फल।
देस-सेवा-बेलि के फूले फले॥

गेह की क्या, देह की सुध भी गँवा।
भूल जीना, जो पड़े मरना मरें॥
खा सकें या खा सकें मेवा नहीं।
लोग सेवा के लिये सेवा करें॥

पारस परस

धर्म

जोत फूटी गया अँधेरा टल।
हो गई सूझ सूझ पाया धन॥
दूर जन-आँख-मल हुआ जिस से।
धर्म है वह बड़ा विमल अंजन॥

रह सका पी जिसे जगत का रस।
रस-भरा वह अमोल प्याला है॥
जल रहे जीव पा जिसे न जले।
धर्म-जल-सोत वह निराला है॥

है सकल जीव को सुखी करता।
रस समय पर बरस बहुत न्यारा॥
है भली नीति-चाँदनी जिस की।
धर्म है चाँद वह बड़ा प्यारा॥

छाँह प्यारी सुहावने पत्ते ।
डहडही डालियां तना औंधा ॥
हैं भले फूल फल भरे जिस में ।
धर्म है वह हरा भरा पौधा ॥

तो न बनता सुहावना सोना ।
औ बड़े काम का न कहलाता ॥
जीव-लोहा न लौहपन तजता ।
धर्म-पारस न जो परस पाता ॥

ज्ञान-जल का सुहावना बादल ।
प्रेम-रस का लुभावना प्याला ॥
है भले भाव-फूल का पौधा ।
धर्म है भक्ति-बेलि का थाला ॥

जोकि निर्जीव को सजीव करें ।
वह उन्हीं बूटियों-भरा बन है ॥
धर्म है जन समाज का जीवन ।
जाति-हित के लिये सजीवन है ॥

धर्म पाला कलह कमल का है।
रंज मल के निमित्त है जल कल ॥
है पवन बेग बैर बादल का।
लाग की आग के लिये है जल ॥

धर्म की धाक

है चमकता चाँद, सूरज राजता।
जोत प्यारी है सितारों में भरी ॥
है बिलसती लोक में उस की कला।
है धुरे पर धर्म के धरती धरी ॥

धर्म-बल से जगमगाती जोत है।
है धरा दल फूल फल से सोहती ॥
जल बरस, बादल बनाते हैं सुखी।
है हवा बहती महँकती मोहती ॥

छांह दे फूल से फबीले बन।
फल खिला है उदर भरा करता॥
धर्म के रंग में रँगा पौधा।
रह हरा चित्त है हरा करता॥

क्यों घहरते न पर-हितों से भर।
हैं उन्हें धर्म-भाव बल देते॥
चोटियां चूम चूम पेड़ों को।
मेघ हैं घूम घूम जल देते॥

धर्म-जादू न जो चला होता।
तो न जल-सोत वह बहा पाता॥
किस तरह तो पसीजता पत्थर।
क्यों पिघल दिल पहाड़ का जाता॥

लोक-हित में न जो लगे होते।
किस तरह ताल पोखरे भरते॥
धर्म की झार जो न रस रखती।
तो न झरने सदा झरा करते॥

हैं लगातार रात दिन आते।
भूलता है समय नहीं वादा॥
धर्म-मर्याद से थमा जग है।
है न तजता समुद्र मर्यादा॥

जो न मिलती चमक दमक उस की।
तो चमकता न एक भी तारा॥
धर्म की जोत के सहारे ही।
जगमगा है रहा जगत सारा॥

धर्म की धुन

है पनपने फूट को देता नहीं।
धर्म आपस में करा कर संगतें॥
है बढ़ाता पाठ बढ़ती के पढ़ा।
है चढ़ाता एकता की रंगतें॥

धर्म है काम का बना देता।
काहिली दूर काहिलों की कर॥
खोल आँखें अकोर वालों को।
कूर की काढ़ काढ़ कोर कसर॥

धर्म की चाल ही निराली है।
वह चलन को सुधार है लेता॥
है चलाता भली भली चालें।
वह कुचल है कुचाल को देता॥

काढ़ता धर्म उस कसर को है।
ध्यान जो नाम का नहीं रखती॥
काम उस का तमाम करता है।
जो 'कभी' काम का नहीं रखती॥

धर्म ने उस के कसाले सब हरे।
हैं सुखों के पड़ गये लाले जिसे॥
है वही पिसने नहीं देता उन्हें।
पीसते हैं पीसने वाले जिसे॥

जो दोहाई न धर्म की फिरती।
तो बिपत पर बिपत बदी ढाती॥
काट तो काटती कलेजों को।
चाट तो चाट और को जाती॥

धर्म की देखभाल में होते।
है बहँक बेतरह न बहँकाती॥
है बुराई नहीं बुरा करती।
पालिसी पीसने नहीं पाती॥

धर्म के चलते सितम होता नहीं।
जाति कोई है नहीं जाती जटी॥
धूल झोंकी आँख में जाती नहीं।
धूल में जाती नहीं रस्सी बटी॥

धर्म का बल

रंग अनदेखपन नहीं लाया।
अनभलों को न सुध रही तन की॥
धर्म की आनबान के आगे।
बन बनाये सकी न अनबन की॥

बद लतों की बदल बदल रंगत।
धर्म बद को सुधार लेता है॥
दूर करता ठसक ठसक की है।
ऐंठ का कान ऐंठ देता है॥

धूल में रस्सी न बट पाके सकी।
देख करके धर्म की आँखें कड़ी॥
कर न अंधाधुंध पाई धाँधली।
दे नहीं धोखा सकी धोखाधड़ी॥

कर धमाचौकड़ी न धूत सके।
भूत के पूत चौंक कर भागे॥
कर सका ऊधमी नहीं ऊधम।
धर्म की धूम धाम के आगे॥

देख कर धर्म धर पकड़ होती।
है न बेपीरपन बिपत ढाता॥
साँसतें साँस हैं न ले सकतीं।
औ सितम कर सितम नहीं पाता॥

धर्म उस बात को बदलता है।
है सगी जो कि बदनसीबी की॥
जाति-सर की बला बनी जो है।
वह कसर है निकालता जो की॥

धर्म की धौल है उसे लगती।
चाल जो देस को करे नटखट॥
भूल जो डाल दे भुलावों में।
चूक जो जाति को करे चौपट॥

है बनाता बुरी गतें उन की।
जो तरंगें न जाति-मुख देखें॥
धर्म नीचा उन्हें दिखाता है।
जो उमंगें न देस-दुख देखें॥

धर्म है उन को रसातल भेजता।
जिन बखेड़ों से न जन होवे सुखी॥
जो बनावट जाति-दिल देवे दुखा।
जो दिखावट देस को कर दे दुखी॥

चोट करता धर्म है उस चूक पर।
काट दे जो देस-ममता-मूल को।
लोग जिस से जाति को हैं भूलते।
है मिलाता धूल में उस भूल को।

धर्म है बीज प्यार का बोता।
बात बिगड़ी हुई बनाता है॥
जो नहीं मानता मनाने से।
मिन्नतें कर उन्हें मनाता है॥

जो नहीं हेल मेल कर रहते।
वह उन्हें हित बना हिलाता है॥
मैल कर दूर मैल वालों का।
धर्म मैला नहीं मिलाता है॥

ठोकरें खा जो कि मुँह के बल गिरे।
है उन्हें उस ने समय पर बल दिया॥
धर्म ने ही भर रगों में बिजलियाँ।
कायरों का दूर कायरपन किया॥

धर्म का कमाल

धर्म ऊंचे न जो चढ़ा पाता
तो न ऊंचे किसी तरह चढ़ती॥
जो बढ़ाता न धर्म्म बढ़ कर के।
तो बढ़ी जाति किस तरह बढ़ती॥

क्यों बहुत देस में न हो बसती।
क्यों न हो रंग रंग की जनता॥
धर्म निज रंगतें दिखा न्यारी।
है उसे एक रंग में रँगता॥

है उभर कर न देस जो उभरा।
धर्म ही ने उसे उभारा है॥
हार कर भी कभी नहीं हारा।
वह गिरी जाति का सहारा है॥

मर रही जाति के जिलाने को।
धर्म है सैकड़ों जतन करता॥
है वही जान डालता तन में।
है रगों में वही लहू भरता॥

है जहां दुख दरिद्र का पटपर।
धर्म सुख-सोत वाँ लसाता है॥
बेजड़ों की जमा जमा कर जड़।
देस उजड़ा हुआ बसाता है॥

जाति जो हो गई कई टुकड़े।
धर्म हिल मिल उसे मिलाता है॥
जोड़ता है अलग हुई कड़ियां।
वह जड़ी जीवनी पिलाता है॥

खोल आँखें, हिला डुला बहला।
कर सजग काम में लगाता है॥
धर्म कर सब जुगुत जगाने की।
सो गई जाति को जगाता है॥

धर्म का बल मिल गये सारी बला।
जो भगाने से नहीं है भागती॥
तो जगाये भाग जागेगा नहीं।
लाख होवे जाति जीती जागती॥

धर्म की करामात

जब भलाई मिली नहीं उस में।
किस तरह घर भली तरह चलता॥
क्यों अंधेरा वहां न छा जाता।
धर्म-दीया जहां नहीं बलता॥

जो कि पुतले बुराइयों के हैं।
क्यों न उन में भलाइयां भरता।
देवतापन जिन्हें नहीं छूता।
है उन्हें धर्म देवता करता॥

जो रहे छीलते पराया दिल।
क्यों न वे छल-भरे छली होंगे॥
जायगा बल बला न बन कैसे।
धर्म-बल से न जो बली होंगे॥

है बड़ा ही अमोल वह सौदा।
मतलबों-हाथ जो न पाया बिक॥
मूल है धर्म प्यार-पौधे का।
है महल-मेल-जोल का मालिक॥

है अंधेरा जहां पसरता वाँ।
धर्म की जोत का सहारा है॥
डर-भरी रात की अँधेरी में।
वह चमकता हुआ सितारा है॥

धूत-पन-भूत भूतपन भूला।
बच बचाये सकी न बेबाकी॥
धर्म के एक दो लगे चाँटे।
भागती है छुट्टैल-चालाकी॥

धर्म-जल पाकर अगर पलता नहीं।
तो न सुख-पौधा पनपता दीखता॥
बेलि हित की फैलती फबती नहीं।
फूलती फलती नहीं बढ़ती लता॥

है जिसे धर्म की गई लग लौ।
हो न उस की सकी सुरुचि फीकी॥
है नहीं डाह डाहती उस को।
है जलाती नहीं जलन जी की॥

धर्म देता उसे सहारा है।
जो सहारा कहीं न पाता है।
टूटता जी न टूट सकता है।
दिल गया बैठ वह उठाता है॥

बाँध-तदबीर बाँध देने से।
कब न भरपूर भर गये रीते॥
ब्योंत कर धर्म के बनाने से।
बन गये लाखहा गये बीते॥

धर्म के सच्चे धुरे के सामने।
दाल जग-जंजाल की गलती नहीं।
भूलती हैं नटखटी की नटखटी।
हैकड़ों की हैकड़ी चलती नहीं॥

धर्म उस का रंग देता है बदल।
जाति जो दुख-दलदलों में है फँसी॥
बेकसों की बेकसी को चूर कर।
दूर करके बेबसों की बेबसी॥

खल नहीं सकता उन्हें खलपन दिखा।
छल नहीं सकता उन्हें कोई छली॥
खलबली उन में कभी पड़ती नहीं।
धर्म-बल जिन को बनाता है बली॥

किस लिये अंधी न हित-आँखें बनें।
धर्म का दीया गया बाला नहीं॥
क्यों न वाँ अंधेर-आँधियाला घिरे।
है जहां पर धर्म-उँजियाला नहीं॥

पाप सैं पेचपाच पचड़ों से।
प्यार के साथ पाक रखती है॥
धाक है और धाक से न रही।
धर्म की धाक धाक रखती है॥

परिशिष्ट

जी की कचट

चतुका

किसी के कभी यों बुरे दिन न आये।
किसी ने कभी दुख न ऐसे उठाये॥
भला इस तरह हाथ किस ने बँधाये।
किसी ने कभी यों न आँसू बहाये॥
हमारी तरह बात किस ने बिगाड़ी।
उलहती हुई बेलि किस ने उखाड़ी॥

हमारे लिये आन की बात कैसी।
किसी की हुई आँख नीची न ऐसी॥
हमारी गई है बिगड़ चाल जैसी।
किसी की कभी चाल बिगड़ी न वैसी॥
किसी के न यों उलझनें पास आईं।
किसी ने बुरी ठोकरें यों न खाईं

किसी ने हमारी तरह है न खोया।
किसी ने नहीं नाम हम सा डुबोया॥
किसी ने नहीं इस तरह हाथ धोया।
भला कौन यों मूँद कर आँख सोया॥
किसी को गई पीठ कब यों लगाई।
भला यों गई धूल किस की उड़ाई॥

कभी यों न पतले हुए दिन किसी के।
कभी यों हुए रँग किसी के न फीके॥
किसी ने किये काम कब यों हँसी के।
कभी इस तरह हम बुरे थे न जी के॥
किसी ने कभी है न इतना अँगेजा।
भला थाम किस ने लिया यों कलेजा॥

गिरे जिस तरह हम गिरेगा न कोई।
कभी इस तरह पत किसी ने न खोई॥
किसी की न मरजाद यों फूट रोई।
किसी ने कभी यों न लुटिया डुबोई॥
हमारी तरह धाक किस ने गँवाई।
किसी ने न यों आग घर में लगाई॥

हमें हैं बहुत डाह के ढंग भाते।
हमीं फूट को हैं गले से लगाते॥
हमीं बैर को आँख पर हैं बिठाते।
हमीं हैं घरों बीच काँटे बिछाते॥
हमीं ने सगों का लहू तक बहाया।
हमीं ने बहँक जाति बेड़ा डुबाया॥

हमारी रगों में भरी है बुराई।
खुटाई सभी बात में है समाई॥
हमें भूल सी अब गई है भलाई।
हमें देख कर है कलपती सचाई॥
हमीं हाथ हैं बेढबों का बटाते।
हमीं बेतरह हैं अड़ंगे लगाते॥

दिखावट हमें है बहुत ही लुभाती।
बनावट बिना नींद ही है न आती॥
हमें ऐंठ की रंगतें हैं रिझाती।
ठसक की सभी बात ही है सुहाती॥
बढ़ा आज बेढंग पन है हमारा।
सगों से हमीं कर रहे हैं किनारा॥

न जानें हुई क्या उमंगें हमारी।
उभरती नहीं आज चाहें उभारी॥
बहुत ही ऊँची काम की बात सारी।
उतरती नहीं है गले से उतारी॥
गई गांठ कायरपने से बंधाई।
पड़ी बाँट में है हमारे कचाई॥

नहीं हम किसी के सँभाले सँभलते।
नहीं हम बुरे ढंग अपने बदलते॥
पकड़ ठीक राहें हमीं हैं न चलते।
बुरी लीक पर से हमीं हैं न टलते॥
समय ओर आँखें हमीं हैं न देते।
सबेरा हुआ करवटें हैं न लेते॥

निकम्मापन

नहीं चाहते जो कभी काम करना।
नहीं चाहते जो कि जौ भर उभरना॥
नहीं चाहते जो कमर कस उतरना।
कठिन है कहीं पाँव जिन का ठहरना॥
करेंगे न तिल भर बहुत जो बकेंगे।
भला कौन सा काम वे कर सकेंगे॥

जिन्हें भूल अपनी गई बात सारी।
भली सीख लगती जिन्हें है न प्यारी॥
जिन्हों ने नहीं चाल अपनी सुधारी।
जिन्हों ने नहीं आँख अब तक उघारी॥
भला क्यों न वे सब गँवा सब सहेंगे।
इसी तौर से जो बिगड़ते रहेंगे॥

सच्चे काम करनेवाले

दुखों की गरज क्यों न धरती हिलावे।
लगातार कितने कलेजे कँपावे॥
विपद पर विपद क्यों न आँखें दिखावे।
बिगड़ काल ही सामने क्यों न आवे॥
कभी सूरमे हैं न जीवट गँवाते।
बलायें उड़ाते हैं चुटकी बजाते॥

रुकावट उन्हें है नहीं रोक पाती।
उन्हें उलझनें हैं नहीं धर दबाती॥
न पेचीदगी ही उन्हें है गढ़ाती।
न कठिनाइयां हैं उन्हें कुछ जनाती॥
बिचलते नहीं हैं कभी आनवाले।
उन्हों ने मसल कब न डाले कसाले॥

पड़े भीड़ जौहर उन्हों ने दिखाये।
खुले वे कसौटी कुदिन पर कसाये॥
निखरते मिले वे विपद आँच पाये।
बने ठीक कुन्दन गये जब तपाये॥
सभी आँख में जो सके फूल से फब।
मिले वे न काँटे दुखों में खिले कब॥

न समझा कठिन पाँव बन में जमाना।
कभी कुछ बड़े पर्वतों को न माना॥
हँसी खेल जाना समुन्दर थहाना।
पड़े काम आकाश पाताल छाना॥
कठिन से कठिन काम भी जो सके कर।
उन्हों ने मुहिम कौन सी की नहीं सर॥

उन्हें काठ उकठे हुए का फलाना।
उन्हें दूब का पत्थरों पर जमाना॥
उन्हें गंग धारा उलट कर बहाना।
उन्हें ऊसरों बीच बीये उगाना॥
बहुत ही सहल काम सा है जनाता।
भला साहसी क्या नहीं कर दिखाता॥

अड़ंगे लगाना न कुछ काम आया।
वहीं गिर गया पाँव जिस ने अड़ाया॥
दिया डाल बल झंझटों को बढ़ाया।
न तब भी उन्हें बैरियों ने डिगाया॥
जिन्हें काम कर डालने की लगी धुन।
सदा ही सके फूल काँटों में वे चुन॥

जिन्हों ने न औसान अपना गँवाया।
जिन्हों ने कभी जी न छोटा बनाया॥
हिचकना जिन्हें भूल कर भी न भाया।
जिन्हों ने छिड़ा काम कर ही दिखाया॥
न माना उन्हों ने बखेड़ों का टोना।
न जाना कि कहते किसे हैं 'न होना'॥

चलें चाल गहरी नहीं वे बिचलते।
नहीं वे कतर ब्योंत से हैं दहलते॥
किये लाख चतुराइयां हैं न टलते।
फँसे फन्द में हाथ वे हैं न मलते॥
उन्हें तंगियां है नहीं तान पातीं।
न लाचार लाचारियां हैं बनातीं॥

पिछड़ना उन्हें है न पीछे हटाता ।
फिसलना उन्हें है न नीचे गिराता ॥
बिचलना उन्हें है सँभलना सिखाता ।
गया दाँव है और हिम्मत बँधाता ॥
उलझ गुत्थियां हैं उमंगें बढ़ाती ।
घड़ेबंदियां हैं धड़क खोल जाती ॥

बड़ा जी रखा काम का ढंग जाना ।
बखेड़ों दुखों उलझनों को न माना ॥
जिन्हों ने हवा देख कर पाल ताना ।
जिन्हें आ गया बात बिगड़ी बनाना ॥
उन्हों ने बड़े काम कर हो दिखाये ।
सला कब तरैया न वे तोड़ लाये ॥

डाहुस

सभी दिन कभी एक से हैं न होते ।
बहे हैं यहां साथ सुख दुख के सोते ॥
हँसे जो कभी थे वही अब रोते ।
मिले मंगते मोतियों को पिरोते ॥
अभी आज जो राज को था चलाता ।
वही कल पड़ा धूल में है दिखाता ॥

कभी फेर से है दिनों के न चारा।
सदा ही न चमका किसी का सितारा॥
विपद से न कोई सका कर किनारा।
कहाँ पर नहीं पाँव दुख ने पसारा॥
हुई बेबसी दूर होनी टली कब।
भला भाग से है किसी की चली कब॥

न हो जो कि बिगड़ा बना कौन ऐसा।
गिरा जो न होवे उठा कौन ऐसा॥
न हो जो कि उतरा चढ़ा कौन ऐसा।
घटा जो न होवे बढ़ा कौन ऐसा॥
सदा एक सा है किसी का न जाता।
यहां का यही ढंग ही है दिखाता॥

चमकते दिनों बाद रातें अँधेरी।
घिरे बादलों बीच डूबी उँजेरी॥
पड़ी कीच में फूलवाली चँगेरी।
दहकती हुई आग की राख ढेरी॥
हमें है यही बात सब दिन बताती।
सदा ही घड़ी एक सी है न आती॥

भला फिर कुदिन के लिये हम कहें क्या ।
बुरी गत बिपत के लिये हम कहें क्या ॥
दरद औ दुखों के लिये हम कहें क्या ।
गये छिन सुखों के लिये हम कहें क्या ॥
हमें हैं यही एक ही बात कहना ।
भला है न मन मार कर बैठ रहना ॥

कभी अब नहीं दिन हमारे फिरेंगे ।
न सँभलेंगे अब हम दिनों दिन गिरेंगे ॥
सदा पास बादल दुखों के घिरेंगे ।
कभी अब न सागर बिपद का तिरेंगे ॥
सकेगा चमक अब न डूबा सितारा ।
उबर अब सकेगा न बेड़ा हमारा ॥

समझ सोच यों सोच में डूब जाना ।
गिरा हाथ औ पाँव जीवट गँवाना ॥
न जी से उमगना न हिम्मत दिखाना ।
अपाहिज बने काम से जी चुराना ॥
बुरा है, खनेंगे यही जड़ हमारी ।
बिगड़ जायगी बन गई बात सारी ॥

अगर चाँद खो सब कला फिर पलेगा।
अगर बीज मिल धूल में बढ़ चलेगा॥
अगर काटने बाद केला फलेगा।
अगर बुझ गये पर दिया फिर बलेगा॥
भला तो न क्यों दिन फिरेंगे हमारे।
दमकते मिले जब कि डूबे सितारे॥